मानव धर्म प्रकाश

प्रस्तावना

(लेखक द्वारा)

श्री कृषक, देवी चरन, मुंशी लाल जी,

आपने इच्छा प्रकट की है कि मैं अपने विचार और अनुभवों को स्पष्ट रूप से प्रकट कर जाऊँ, अतः आप लोगों की अभिलाषा को स्वीकार करता हुआ उन्हें लिखता हूँ. पहली बात सुमिरन-ध्यान-भजन की है, जिस पर अमल करके मैंने जीवन गुजारा है. सोच और सोचने वाला कहाँ रहते हैं.

दोनों का मखजन दिल है ये वहाँ रहते हैं:-

मन अपनी हस्ती नहीं रखता है दायमी समझ आई है यह।

जब तक है यह, सोच विचार सभी रहते हैं ।।

हस्ती के तमव्वुज में बनते हैं हजारों बुलबुले।

हर बुलबुले में सोच और विचार रहते हैं ।।

जब तक बुलबुला मौजूद है तखय्यैल हैं सदा ।

टूट कर ये सारे, ज़ात में गुम होते हैं ।।

इसलिये जब तक जिन्दगी का बुलबुला मौजूद है यह अपना काम करने के लिये मजबूर है. किस में ताकत है जो इसके काम को रोक सके. निस्संदेह इसके काम को नियमित करने (regularize) और समता या एक सूत्र में रखने (harmonize) के लिये सुमिरन, ध्यान और भजन की तालीम की मुख्यता है. इस तालीम का ही दूसरा नाम गुरुमत है. यदि मनुष्य किसी पूर्ण पुरुष या मर्मज्ञ का आसरा ले तो वह शरीर रूपी बुलबुले के काम को श्रेष्ठ और आनन्ददायक बना सकता है. इसलिए गुरु की महिमा है जिसकी कृपा से यह बुलबुला अपने खेल को आनन्दपूर्वक खेलता हुआ निज रूप में मिल जाता है.

आवे जावे सो माया साधो, मन बहु नाच नचाया.

भूमिका

श्री पतराम जी गर्ग लखनऊ वाले मुझ से कारखाने में मिले. उनकी लड़की भी साथ थी. कुछ देर बातचीत करके वे चले गये. आज मेरे दिल में विचार आया कि तूने जो काम किया है और श्री पतराम जी जैसे सज्जन पुरुष जिसमें ध्यानी 'मनुष्य बनो' पत्रिका में मदद करते हैं क्या उसमें कोई लाभ भी है या भविष्य में कोई होगा अथवा केवल एक व्यर्थ का भार सिर पर ले रखा है. इस विचार के आते ही अन्तर्ध्यान हो गया. लगभग एक घंटे तक किसी हालत या अनुभव में रहा. जब

होश आया तो ये विचार दिल में आये जिनका सारांश नीचे दिया जाता है.

1. संसार के दुखी प्राणियों के बाहरी प्रभावों ने महात्मा बुद्ध को विवश किया और उन्होंने अपने अन्तर में जाकर खास अनुभव प्राप्त किया. उसको उस समय की परिस्थितियों के अनुसार प्रकट करते हुए उन्होंने तीन सिद्धांत निर्धारित किये और बुद्धमत की नींव डाली.

बुद्धम् शरणम् गच्छामि, संघम् शरणम् गच्छामि, धम्मं शरणम् गच्छामि.

उनके उपदेश ने अशोक के समय में विश्वव्यापी रूप धारण किया. महाराजा अशोक के दिल पर गौतम बुद्ध की तालीम के संस्कार थे.

2. श्री लोकमान्य तिलक के दिल में स्वतंत्रता का ख्याल पैदा हुआ और उसी ख्याल ने महात्मा गाँधी के द्वारा भारत को स्वतंत्र कराया. इसी प्रकार कलियुग में मनुष्यों के कष्टों के निवारणार्थ सन्त कबीर प्रगट हुये. उन्होंने नाम की महिमा के सहारे हिन्दुओं, मुसलमानों और अन्य धर्मावलम्बियों के लिए एक सम्मिलित संदेश दिया कि हकीक़त (सचाई-सत्यस्वरूप) और असलीयत क्या है. इसके बाद जितनी भी गुरुमत की शाखायें पैदा हुईं, सबके अन्दर ज्ञात या अज्ञात रूप से उन्हीं का तत्त्व काम करता है. वर्तमान समय में या कलियुग में नाम की महिमा है.

कलि केवल इक नाम अधारा। श्रुति स्मृति संत मत सारा ।।

अन्त में सत्पुरुष राधास्वामी दयाल ने नाम की महिमा वर्णन करते हुए उच्च स्वर से कहा:-

नाम रहे चौथे पद माहीं, यह ढूँढें त्रिलोकी माहीं।

इस चौथे पद की व्याख्या इस पुस्तक में है. इसके पश्चात् महर्षि शिवव्रत लाल जी ने संतमत की तमाम शाखाओं और धर्मों की मूल शिक्षा में इस सचाई को दिखलाते हुए जनसाधारण को स्वतंत्र विचारधारा की ओर ले जाने का प्रयास किया. मुझे इन तमाम महापुरुषों की तालीम को वर्तमान समय की परिस्थितियों के अनुसार एक ऐसे ढंग से प्रगट करने का कार्य दिया गया था, जिसमें किसी धर्म, पंथ और सम्प्रदाय का कोई बखेड़ा न रहे; बल्कि उस सिद्धांत की जानकारी कराना था जिसका आचरण, अमल या साधन करते हुये प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान, सिख हो या ईसाई, अथवा कोई और, अपने लोक और परलोक को श्रेष्ठ बना कर सुख और शान्ति प्राप्त कर सकता है और अपने अमली जीवन से दूसरों का मददगार बन सकता है. इस सिद्धांत की व्याख्या मैंने इस पुस्तक में की है. मैंने बार-बार कहा है कि मुझे कोई दावा नहीं है मगर हाँ, जो कुछ मैंने समझा है तथा अनुभव किया है उसको सचाई के साथ प्रगट कर दिया है. जिस प्रकार ऊपर की दो मिसालें साक्षी हैं कि जिस नीयत से काम किया जाता है उसका फल अवश्य होता है बशर्ते कि नीयत में सचाई हो. अतः मुझे विश्वास है कि यह विचारधारा भी अवश्य विश्वव्यापी होकर रहेगी और समय आने पर जीवों को धार्मिक और सांसारिक जीवन में सहायक होगी. संतों और फ़कीरों की नीयत भी यही थी.

नानक तेरे बहाने सरबत का भला.

इसलिए जिन सज्जनों ने इस शुभकार्य में किसी प्रकार की भी सहायता दी है या दे रहे हैं अथवा आगे देंगे, मेरा विश्वास है कि उनका यह काम अपने लिये और भावी संतानों के लिये अवश्य

लाभदायक होगा. इस विश्वास के कारण मैं अपने काम को उचित समझता हूँ. मेरा कोई ज़ाती ताल्लुक या ग़र्ज़ इस 'मनुष्य बनो' या इंसानियत के प्रचार से नहीं है. जो अनुभव में आया प्रगट कर दिया. जो इसे ठीक समझते हैं अमल करें. जो नहीं समझते न करें.

मेरा मुझको कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर।

तेरा तुझ को सौंपते, क्या लागे है मोर ।।

हाँ, अपने निज अनुभव के आधार यह जोरदार शब्दों में अवश्य कहूँगा कि जो अनुभव मैंने अपने जीवन में प्राप्त किया है और जिसको इस पुस्तक में संक्षेप में प्रगट कर रहा हूँ इसके अलावा और कोई मार्ग नहीं है जिस पर चलकर मनुष्य अपने व्यक्तिगत, घरेलू, सामाजिक राजनीतिक, मानसिक व आत्मिक जीवन को श्रेष्ठतम और आनन्द दायक बना सके. इसलिए मैं इस संक्षिप्त लेख को प्राणीमात्र विशेषतया वर्तमान व भावी लीडरों की सेवा में पेश करता हूँ.

आपका अपना आप

स्वरूप का अंश

दयाल फकीर

मानव घर्म प्रकाश

प्रार्थना

सर्वाधार (निजस्वरूप) के दरबार में.

हैपने के साथ में अहसास जब तक मौजूद है।

कैसे मुकिर हो सकता हूँ मैं कि नहीं तेरा नमूद[1] है ।।

जब से होश आया लगा तेरी तरफ ध्यान अपना।

देखना चाहता था मिलना चाहता था यह था जज्बा[2] अपना ।।

जज़्बे ने यकीन दिलाया कि तू आया धर चोला दयाल।

प्रेम किया लुत्फ़ लिया निछावर किया सब तन मन व माल ।।

आपने जैसा गढ़ा वैसा बन के खिलादे प्यारे अकाल।

अर्पण करता हूँ ख़ुद को तेरे ऐ मेरे प्यारे दयाल ।।

न रूप न रंग न रेखा कोई देख सका मैं तेरी।

हालत है तो ऐ स्वामी बस इक जिन्दगी की मेरी घ।।

कबीर नानक राधास्वामी व दीगर संतों और आशिकों ने।

हज़ारों सिफ़्ते गढ़ गढ़ की थी हमद व सना[3] तेरी ।।

मुझे भी चाह थी देखूँ तुम्हें करूँ सिफ़्त व सना[4] तेरी।

पर जब रूबरू हुआ देखा, नहीं है बाकी हस्ती[5] मेरी ।।

मुरशिद बनके तूने जो ख्याल दिया निभाया जितना निभा।

वही जताया बताया और समझाया जो समझ सकी बुद्धि मेरी ।।

भेंट करता हूँ सच्चे हृदय से ले लो चरणों में हस्ती मेरी।

अपने चरणों में लगालो यही है ऐ मालिक तमन्ना मेरी ।।

दयाल फकीर

(1) प्राकट्य (2) भाव (3) प्रशंसा (4) गुणगान (5) व्यक्तित्व

हजूर दाता दयाल शिवव्रत लाल जी महाराज के चरण कमल में भेंट

तेरी दया से निश्चय हुआ, तू गैर नहीं मैं गैर नहीं।

'तू' 'मैं' हुआ, 'मैं तू' हुआ, तू गैर नहीं मैं गैर नहीं ।।

जिन्दगी के खेल में, पहलूये अदब का है दस्तूर।

वरना हकीकत है यही, तू गैर नहीं मैं गैर नहीं ।।

ज़ात तेरी में मैं ने, निज आपा को लाकर के।

यह समझ लिया है ऐ दाता, तू गैर नहीं मैं गैर नहीं ।।

जब तक खेल खिलाना है या जब तक है कर्म का चक्कर।

समझ गया मौज की रचना है, तू गैर नहीं मैं गैर नहीं ।।

आपने संस्कार दिया था कि चोला छोड़ने से पहले तालीम को नये ढँग से प्रगट कर जाना, वह कर दिया.

नहीं मालूम मैंने ग़लत किया या ठीक किया।

बाहोशी की हालत में जो कराया मौज ने कर दिया ।।

अगर है ठीक तो भी वाह वाह, नहीं है तो भी वाह वाह।

मैं हर हालत में खुश हूँ, नहीं कुछ अपना है यहाँ ।।

कभी जज़्बा था कहता था लगालो अपने चरणों में।
हुआ मालूम अब मुझको सदा रहता हूँ चरणों में ।।
यह आलम तेरा घर है और कुल इंसान तेरे हैं बच्चे।
तू इनमें आप रहता है, हुआ है मुझको अब निश्चय।।
खुशी से काम तेरा जो तेरे ही अर्पण अब करता हूँ।
न फल की कोई ख्वाइश है स्वतंत्र होके रहता हूँ ।।
मौज से जो होना है वह अवश्य होके रहता है।
तेरे ही आसरे पर मैं सदा अब रह के जीता हूँ ।।

दयाल फकीर

हुज़ूर मौल्ला मुक़द्दस राय सालिगराम साहब की पवित्र याद में

जज़्बये इश्क बढ़ा था की थी पुकार।
राम के मिलने की तमन्ना का था उभार ।।
ख्वाब था जिन्दगी का लाया दरे दौलत पै।
वहाँ से आपके जीवन का मिला था खयाल ।।
दाता ने सार बचन नज़्म नसर की थी हवाले।
जिन्दगी में तेरे वचन थे पढ़े और संभाले ।।
दाता ने आपके नाम के लिये, अपना जीवन बर्बाद किया।
मैं सोचा करता था, वह राज़ क्या जो आपने दिया ।।
लब खोलकर बंद किये, यह राज़ था बताया।
यह कहा करते थे मुझे जो उन्होंने आप से पाया ।।
साथ ही
आपका इरशाद था फैलेगी तालीम यह संसार में।
फिर क्या थी वह तालीम नहीं आती थी विचार में ।।
उम्र सारी ख़ब्त में गुजारी ऐ पीरों के पीर।
जो समझा जाहिर कर दिया करता हूँ बनकर फ़कीर ।।
आरजू है संत मत की सारी शाखें एक हों।
सत्संगी हिलमिल के रहें और दिल के नेक हों ।।

दयाल फकीर

हुज़ूर बाबा साँवले शाह (बाबा सावनसिंह) की सेवा में निवेदन

दाता ने काम दिया था हो गया दिल मिल यकीन।

मजबूर हो तेरे दर पै गया था हो बा यकीन ।।

आपने फ़र्माया बे खौफ़ होकर काम करना ऐ मर्दे फ़कीर।

काम अपना भेंट तेरी करता हूँ मैं बा यकीन ।।

आरज़ू है समझें तेरे पैरोकार राजे हकीकत को।

आपस में भाई बन के रहें छोड़ें दिली नफ़रत को ।।

फूले फले संत मत खुशी से बसे संसार यह।

इसी नियत से काम करता हूँ फ़क़त ग़र्ज़ है यह ।।

दयाल फकीर

श्री गुरु नानकदेव अकाल मूरति के चरण कमल में

दाता दयाल ने दिया था मुझे यह खयाल।

कि आप थे अवतार और थे पुरुष अकाल ।।

खोज की पंथ की या दिल की, समझ आई यह बात।

कि मकसदे जिन्दगी है, इंसान रहै निर्भय निर्वैर और अकाल।।

नाम की महिमा सुनी थी समझा है उसका कमाल।

नाम में बरकत है और नाम में रहता है दयाल ।।

जब समझ लिया निज अनुभव से किया है उसको जाहिर।

रोचक भयानक पना छोड़ कर यथार्थ का है इज़हार ।।

भेंट करता हूँ तेरे नाम लेवाओं को सच्चे दिल से।

चाहता रहता हूँ मनुष्य जाति हो जावै निहाल ।।

तू अकाल है दयाल है भूलचूक बख्शना मेरी।

मौज में रह किया कर्म है नहीं कोई ज़ाती खयाल ।।

दास फकीर कर जोड़ कर विनती करै ए नानक पीर।

पीर हरो संसार की गर आप हो दयाल।।

दयाल फकीर

प्रार्थना श्री संतकबीर के चरण कमल में

दाता ने आपकी ज़ात को माना था कबीर ।

फ़कीरों के फ़कीर थे और पीरों के पीर।

कलियुग में प्रगट होकर दिया था संदेश एक ।

नाम बड़ा संसार में धारो उसकी टेक।

जो समझा मैंने कहा निज अनुभव के अनुसार।

भूल भरम में जग फँसा समझै नहीं सार असार।

ताते दुखी हैं हम समझ सके न तेरे बैन।

बिना समझे वचन के नहीं पाता नर है चैन।

भेंट तुम्हारी कर रहा हूँ अपना ख्याल और काम।

कबूल उसको कीजिए जो लाया है दास फकीर।

दयाल फकीर

मानव धर्म प्रकाश

प्रथम परिच्छेद

मिट गये सब भरम मन के, दिल में उजाला हो गया।

जिन्दगी को खेल समझा, अनुभव का बोलबाला हो गया ।।

थी ख्वाइश दिल में बता जाऊँगा, उस भेद को।

जिसको समझने के लिये 'फकीर' था बावला हो गया ।।

ग़र्ज़ नहीं मतलब नहीं, बेख्वाइशी की हालत अपनी।

लोगों का जीवन बने, यह मेरा शगल अब हो गया ।।

मैं उन भाइयों, महापुरुषों और लीडरों से, जो मानवजीवन के सुधार के इच्छुक हैं, उनको पूज्य मानता हुआ, कुछ कहना चाहता हूँ, मगर कहने से पहले:-

हाथ जोड़ नवाय मस्तक, सबसे माँगता हूँ क्षमा।

जो कुछ है मौज लिखा रही, वह है मेरे जीवन का तजुरबा ।।

बिन बुलाये मेहमान की, नहीं होती है कोई भी इज्ज़त।

मगर इज्ज़त और मान के, दरजे से कुदरत ने बरी कर दिया ।।

दर्द देकर दयाल बनाकर, मजबूर करके कोई है लिखा रहा।

अपने बस की कोई बात नहीं, बस समझ लो मैं दीवाना हुआ ।।

संसार के दुखी लोग क्या चाहते हैं? प्रत्येक व्यक्ति बता सकता है. धन, दौलत, इज्ज़त, मान, बड़ाई, अमन, शान्ति. आगे बढ कर भक्ति, ज्ञान और निजस्वरूप (परमतत्त्व) के साक्षात्कार की लालसा रखते हैं. इसकी प्राप्ति के लिये हम क्या करते हैं:-

कोई कर्म उपाय पर ज़ोर देता है, कोई करता है वन्दना।।

कोई छल कपट चतुराई से, मतलब है निकालता ।।

कोई मंदिर और मस्जिद में जाकर, करता है पूजा और बन्दगी ।।

कोई किसी मुरशिद के दर पर, मस्तक जाके टिकाता है ।।

कोई ईमानदारी और सचाई के, पहलू को अपनाता है।।

चलता सुराते* मुस्तकीम पर और फल को उसके खाता है ।।

सारे कर्म किये हैं मैंने, और तजुरबा अपनाया है।।

सारी उम्र इसी ख़ब्त में गुज़री, लिखदूँ जो समझ में आया है ।।

* सीधा मार्ग

अपने जीवन के अनुभव को प्रगट करने के लिये मैंने कितनी एक पुस्तकें तशरीह हिदायतनामा, तशरीह बारहमासा, आवागमन, विश्वशान्ति, मनुष्य बनों आदि लिखीं और मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि जो कुछ भी मनुष्य को मिलता है वह उसके अपने कर्म का फल होता है. मैं कर्म का अर्थ इच्छा, विचार और संकल्प के लेता हूँ. इसी बात को प्राचीन काल में ऋषियों, मुनियों और महापुरुषों ने समझाया है. इसकी पुष्टि वेद, शास्त्र व अन्य ग्रन्थों से होती है. उन्होंने भिन्न-भिन्न उपाय या साधन वर्णन किये हैं, लेकिन मन की चंचलता के कारण मनुष्य उन पर अमल करने में कठिनाई प्रतीत करता है. यदि अमल के इच्छुक प्रयत्न भी करते हैं तो मार्ग पेचीदा और लम्बा होने के कारण सफलता दृष्टिगोचर नहीं होती. इसलिये वर्तमान युग (कलियुग) में सफलता का सरल सा नुस्खा यदि है तो वह केवल नाम है.

कलि केवल इक नाम अधारा।

श्रुति स्मृति संत मत सारा ।।

मगर याद रखिये,

नाम रहे सतगुरु आधीना।

नाम में तीन बातें शामिल हैं (1) सुमिरन (2) ध्यान और (3) भजन. सुमिरन का अर्थ है याद करना. ध्यान का अर्थ है तसव्वुर (किसी का ध्यान बाँधना) और भजन कहते हैं महवियत प्राप्त करने को, लय होने को. इसके साधन के लिये आवश्यक है कि जिज्ञासु किसी पूर्ण पुरुष या इस भेद के ज्ञाता का सत्संग करे और उसकी हिदायत के अनुसार अमल करे; वरना सफलता मिलना कठिन है.

गायत्री के प्राणायाम मंत्र में सात स्थानों का वर्णन है उसकी समानता संतों के वर्णित स्थानों से इस प्रकार की जा सकती है.

प्राणायाम के स्थान -ओं भू, भुवः, स्वः, महः, जनः

संतों के स्थान - सहस दल कंवल, त्रिकुटी, सुन्नमहासुन्न

तपः, सत्यम्, भँवर गुफा, सतलोक

मैं विद्वान नहीं हूँ. निज अनुभव के आधार पर केवल सारांश में व्याख्या कर रहा हूँ.

(1) सहस दल कँवल -यह रचना में बाहर भी है और तुम्हारे अन्दर भी है. बाहरी रचना में यह सृष्टि का आधार, कर्ता-धर्ता है. इसी प्रकार तुम्हारे अन्दर का ज्योति स्वरूप जो तुम्हारा मन है, वह तुम्हारी जिन्दगी को बनाने वाला है और बिगाड़ने वाला भी है. (ये स्थान दोनों भौहों के बीच में हैं)

जिस प्रकार की इच्छा तुम अपने मन में धारण करोगे पहले उसकी याद या सुमिरन दिल में स्थित होगी, फिर उसका रूप या ध्यान बनाओगे. उसके पश्चात् इच्छा का घनापन भजन के रूप में आकर, दिल उसमें लय हो जायगा और उसी प्रकार के हालात वाकात पैदा होकर उस इच्छा की पूर्ति का प्रबन्ध कर देंगे. मगर यह याद रहे कि यदि तुम्हारी इच्छा नेकी और सचाई पर निर्धारित है तो उनका परिणाम सुखदायक और आनन्ददायक होगा और यदि वह इच्छा दूसरों को हानि पहुँचाने की है तो वह पूरी तो हो जायगी मगर उसका नतीजा सुखदायक न होगा. इसलिए हृदय की शुद्धि को संतों ने मुख्य रखा है.

त्रिकुटी -रचना में यह स्थान बाहर भी है. (नर देही में मस्तिष्क में सहस दल से कुछ ऊपर है) इसका मालिक ओंकार है. यह तुम्हारे अन्तर में भी है और इसका आधार तुम्हारा मन है जिस में विवेक और समझ है. कुदरत में बाहर प्रत्येक कार्य किसी उसूल और तरीके से हो रहा है. इसी प्रकार मनुष्य को हर प्रकार का इल्म या ज्ञान चाहे वह सांसारिक हो, पारमार्थिक हो या कोई और हो, अपने अन्तर में सुमिरन, ध्यान और भजन से प्राप्त हो सकता है. तीन के साधन की यहाँ भी ज़रूरत होगी. जिस प्रकार की वासना भलाई या बुराई को लेकर मनुष्य अमल करेगा, वैसा ही परिणाम निकलेगा. हाँ, यह मनुष्य की इच्छा पर निर्भर है कि वह कैसा इल्म प्राप्त करना चाहता है.

सम्भव है वर्तमान समय के कोई आचार्य, महंत तथा गद्दीपति या पुस्तकों के वाणीजाल में फंसे हुये लोग मेरी बात को ग़लत ख्याल करें. मैं अपने अन्तर में दाखिल होकर सोचता हूँ कि क्या मैं गलती पर हूँ! लेकिन विचार करने के बाद इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि मेरा अनुभव ठीक है. मैं निज अनुभव की बातें कहता हूँ जो स्वार्थ और पक्षपात रहित हैं.

जब मुझे या किसी सत्संगी को कोई प्रबल इच्छा होती थी तो दाता दयाल को लिखा करते थे और वे जवाब देते थे कि ठीक हो जायगी. यदि वह इच्छा प्रबल होती थी तो पूरी हो जाती थी. इसके विरुद्ध यदि हम शक शुब्हः में रहते या दुविधा व भ्रम में पड़ जाते थे तो नाकामयाबी का मुँह देखना पड़ता था. मैंने स्वयं भी सत्संगियों में इसका तजुर्बा किया है. जब कोई ज़बरदस्त इच्छा वाला विश्वासी मनुष्य मेरे पास आता है तो मैं हमेशा उसे ताकतवर ख्याल दे देता हूँ. यदि उसने उस ख्याल को विश्वास के सहारे ले लिया है तो अपने लौकिक और पारलौकिक कष्टों से छुटकारा पाकर सफल हो जाता है. किसी ने कहा हैः-

भावना पक्की हो मन में पक्का ही विश्वास हो।

क्यों न ऐसे जन की इस रचना में पूरी आस हो ।।

आस में विश्वास और विश्वास विश्व की आस है।

जिस में यह विश्वास है वह कैसे जग में निराश हो ।।

बहुत से भाई मुझे करामाती समझते होंगे. वास्तव में मेरे पास कोई करामात नहीं है. मुझे उसूल का इल्म है. हाँ, जो मनुष्य दुविधा का शिकार हो जाता है वह असफल रहता है. जो आशावादी होकर अपनी इच्छा या वासना में कमजोरी नहीं आने देता वह अपना काम बना लेता है.

सच्चे साधु या गुरु का काम मनुष्य को दुविधा से बचाना है. महाभारत की लड़ाई में अर्जुन दुविधा में फँस गया था. कृष्ण ने गुरु रूप धारण करके समझा बुझाकर उसकी दुविधा, संशय और भ्रम को दूर किया. उसने उनके ख्याल को विश्वास के साथ ग्रहण किया और सफल हुआ.

हमारे ऋषि-मुनियों का गायत्री मंत्र की शिक्षा देने का ध्येय यह था कि सांसारिक जीवन में हम सफल हों. इस मंत्र की तह में यह गुप्त भेद है कि 'जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति से परे उस सूर्य का दर्शन करो. वह तुम्हारी बुद्धियों का प्रेरक होगा.' बुद्धि, ज्ञान या सार समझ की प्राप्ति मनुष्य को सांसारिक जीवन में सफल बनाती है. जिस कदर लोगों ने सांसारिक जीवन में सफलता प्राप्त की है सबने जाने या अनजाने इसी सुमिरन, ध्यान और भजन के उसूल पर अमल किया है. यह दूसरी बात है कि इनको उसूल का ज्ञान था या नहीं, मगर स्वाभाविक रूप से अमली जीवन में इसी उसूल ने काम किया है.

यहाँ सवाल किया जा सकता है कि दुनियावी इच्छाओं के पूरा करने के लिये सुमिरन और ध्यान किसका किया जाय और किस तरह किया जाय.

इस विषय में मेरा उधर यह है कि इस नाम-रूप के जगत में नाम और रूप ही मदद कर सकते हैं. हिन्दू धर्म की पौराणिक शिक्षा ने कमाल किया हुआ है. हर प्रकार की इच्छाओं के पूरा करने के लिये उन्होंने भिन्न-भिन्न इष्टों का सुमिरन और ध्यान बताया है. धन की प्राप्ति के लिये लक्ष्मी का रूप बताया है. विद्या की प्राप्ति को सरस्वती का और शक्ति के लिये दुर्गा का रूप बताया है. मगर इस कलियुग के समय में मनुष्य की ज़रूरतें बहुत हैं इसलिए सन्तों और फ़कीरों ने एक सहल सा नुस्ख़ा तजवीज़ किया है कि किसी अमली पूर्ण पुरुष के ध्यान से ही सब प्रकार की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकता है.

हमारे शास्त्र सच्चे हैं और प्राकृतिक ज्ञान से भरे हुए हैं. चूँकि कलियुग में हर काम जल्दी से होता है और उसको जल्दी पूरा करने के लिये गुर, तरीका, तजवीज़, तदवीर की भी ज़रूरत है, इसलिए गुरु रूप का ध्यान और गुरु का दिया हुआ नाम ही हर एक मंज़िल व स्थान पर सब कुछ होता है; क्योंकि इस ध्यान में पूर्णता मानी हुई है.

मुझे शब्द नहीं मिलते कि अपने भाव को पूर्ण रूपेण प्रगट कर सकूँ कि ऐ मानव! 'तेरे दिल में शक्ति का भंडार है. तू प्रकृति माता का लाडला बेटा है. उसने प्रारम्भ से ही तुझमें अनन्त शक्ति प्रदान की है लेकिन तुझे ज्ञान नहीं है. तू इस शक्ति से काम लेना नहीं जानता और अनजाने में कभी-कभी अनुचित कृत्यों से उस शक्ति को अपने लिये कष्टकारक बना लेता है. अतः आवश्यक है कि किसी पूर्ण पुरुष का सहारा ले और सत्संग से उस शक्ति का सदुपयोग सीख.'

एक बात और ध्यान देने योग्य है कि तुम अपने कर्ता आप हो. लेकिन दूसरों के नहीं. प्रत्येक पुरुष की यही दशा है. इसलिये सुख शान्ति के जिज्ञासुओं के लिये घरेलू, राष्ट्रीय, और सामाजिक जीवन में समान (एक सी) इच्छा और समान ख्याल की बड़ी आवश्यकता है. राय साहब ज्ञानसिंह वेदों का एक मंत्र सुनाया करते हैं. जिसका अर्थ है कि एक ख्याल के होकर रहो. इकट्ठे चलो आदि आदि. इसलिये घरेलू जीवन में सबका समान ख्याल या एक सम्मति हो, इसका मैं मानने वाला हूँ. अधिक स्पष्ट रूप में यूँ समझ लो कि जब तक घरेलू जीवन में स्त्री, पुरुष और परिवार में एक सम्मति नहीं होगी, दुनिया का जीवन कदापि सुखदायक नहीं हो सकता. सांसारिक, शारीरिक और मानसिक सुख-शान्ति के लिये समान विचारधारा (हमख्याली) की आवश्यकता है. इसी प्रकार देश की शान्ति के लिये इत्तेफ़ाक (सहमति) की आवश्यकता है. इसलिये प्रत्येक व्यक्ति को अपने काम से काम रखना चाहिये. छोटे-छोटे मण्डल इकट्ठे होकर बड़ा मण्डल बन जाता है.

इस सफलता का एक मात्र साधन सुमरिन, ध्यान और भजन है. अपनी इच्छा या वासना को याद करते रहो यह सुमिरन है. उसका रूप बनाओ यह ध्यान है. लगातार ध्यान से उसमें लय हो जाओ यह भजन है. सत्संगी (शब्दयोगाभ्यासी) कहेंगे कि भजन तो अनहद शब्द के सुनने का नाम है. यह ठीक है मगर उसके लिए भी प्रबल इच्छा और दिल की एकाग्रता की आवश्यकता है.

याद रखो! हर प्रकार की वासना या इच्छा एक प्रकार का सूक्ष्म माद्दा है या सूक्ष्म प्रकृति है. मेरी 'मनुष्य बनो' व 'उन्नति मार्ग' नामी पुस्तकों को पढ़िये. उनमें इसका पूर्ण विवरण दिया गया है. चूँकि माद्दा या प्रकृति हर समय हरकत या गति में रहता है और हरकत से शब्द और प्रकाश का प्राकट्य (इज़हार) होता है, इसलिए यदि सौभाग्य से वासना के दौरान में वृत्ति अन्तर में ठहर जाय तो उससे जो शब्द प्रगट होगा वह उस व्यक्ति की इच्छा या वासना की प्रकृति का होगा. उसके सुनने से सफलता अतिशीघ्र होगी. इसलिये संतों ने सहसदल के भिन्न-भिन्न प्रकार के शब्दों का ज़िक्र किया है. यहाँ आरती होती है. आरती में घंटा, शंख आदि बजते हैं.

ये शब्द भिन्न-भिन्न प्रकार की उचित और अनुचित वासनाओं के होते हैं जोकि प्रकृति है. फिर सुन लो! जिस इच्छा या वासना को लेकर मनुष्य अपने अन्तर में ठहरेगा, उस वासना की प्रकृति के शब्द को सुनेगा और अवश्य सफल होगा. यदि उस इच्छा में किसी की बुराई, घृणा, द्वेष, ईर्ष्या या अनुचित लालच वगैरह भरा हुआ है तो सफलता के साथ नतीजा दुःख और कष्टदायक होगा.

इसलिये आवश्यक है कि मनुष्य अपनी इच्छाओं को किसी पूर्ण पुरुष के आदेशानुसार रखे. वह तुम्हारी परिस्थिति और विचारधारा के अनुसार तरकीब बता देगा.

साधारणतया लोग दो-दो, तीन-तीन घंटे अभ्यास में बैठते हैं, और शिकायत करते हैं कि उनको वह अन्दरूनी शब्द जो पुस्तकों में बताये गये हैं या सत्संग में प्रगट किये जाते हैं सुनाई नहीं देते. इसमें इनकी समझ का दोष है. चूँकि शब्द प्रकृति से पैदा होता है इसलिये जब तक उनकी आंतरिक इच्छा का जोर न होगा या वासना प्रबल न होगी, मनुष्य को पुस्तकों में बताये हुये शब्द सुनाई न देंगे. अतः यह ज़रूरी है कि पहले मनुष्य अपनी वासना को तीव्र करे. फिर अन्दरूनी शब्द, जो वासना की प्रकृति से पैदा होगा, सुनाई देगा. मुझे अफ़सोस है कि मैं इस भेद को ज्यों का त्यों शब्दों में प्रगट नहीं कर सकता. जिज्ञासु सज्जनों को ज़बानी तौर पर बेहतर तरीके से समझा सकूँगा.

प्रश्न:- यदि कोई व्यक्ति इन स्थानों का अन्दरूनी अनहद शब्द न सुन सके तो क्या उस सूरत में भी वासना का पूर्ण होना सम्भव है?

उत्तर :-सुनो! त्रिकुटी का स्थान गुरु का स्थान है. ओंकार का स्थान है. यह ओंकार तमाम रचना में व्यापक है और यह केवल प्रकृति की रचना की समझ है. सृष्टि का ध्यानपूर्वक अध्ययन करोगे तो तुमको इसका पता लग जायेगा. यद्यपि साँप के टांगें नहीं होतीं मगर उसकी पसलियाँ ही ऐसी तरकीब से बनाई गई हैं कि वह भली भाँति दौड़ सकता है. ऊँट का यदि कद लम्बा है तो उसकी गर्दन भी लम्बी बनाई गई है. इस उसूल का, जो रचना में काम करता है, नाम गुरू ज्ञान या ओम् है. यह ओम् या उसूल या कानूने कुदरत स्थूल रचना में व्यापक है. इसलिये जिस मनुष्य को किसी वासना की पूर्ति की लालसा है उसके लिये ज़रूरी है कि अन्तर में एकाग्रता प्राप्त करे. फिर स्वयं ओंकार या ओम् मनुष्य के अन्दर समझ विवेक व नित्य प्रति नई-नई उपज देता रहेगा. हाँ, यदि इस भेद के ज्ञाता का सहारा मिल जाय तो सफलता जल्द और अवश्य होती है. मेरा विचार तो यह है कि प्रत्येक इच्छा के प्रभाव से उसकी पूर्ति के सामान कुदरत में पैदा होते रहते हैं.

काम रुक सकता नहीं ऐ दिले नादां कोई।

ख़ुद-ब-ख़ुद ग़ैब से हो जायगा सामां कोई ।।

त्रिकुटी क्या है? ध्याता, ध्येय और ध्यान; प्रेमी, प्रेम का आदर्श (प्रेम पात्र) और प्रेम, या इच्छुक, इच्छित वस्तु और इच्छा. यही उसूल पारमार्थिक या रूहानी जिन्दगी में काम करता है. आत्मिक घ्रूहानीघ् जीवन के लिये भी पहले त्रिाकुटी में आना अनिवार्य है. यह ओंकार, णान या समझ जो गुरु का रूप है प्रवॐघि और निवॐघि मार्ग दोनों में सहायता करता है. यही कारण है कि वेदों और अन्य प्राचीन ग्रंथों में ओम् की महिमा वर्णन की गई है. हर बात लिखने से पहले ओम् शद्ब लिखा जाता है. हर काम में पहले ओम् का सहारा लिया जाता है. रिवाज़ मौजूद है मगर उसूल का ज्ञान नहीं है.

योगसाधन या अन्तरीय चढ़ाई के लिये साधक को शब्द और नूर (प्रकाश) दोनों की आवश्यकता है. बिना शब्द और प्रकाश के भी मनुष्य मस्ती या आनन्द की अवस्था तक जा सकता है मगर वहाँ थिरताई नहीं रहती और न वह इष्ट पद है. यही कारण है कि संतों ने कलियुग में जीवों की

कमजोर प्रकृति का ध्यान रखते हुये अमली दृष्टि से शब्दयोग की तालीम दी है ताकि शारीरिक, मानसिक और आत्मिक सुधार जल्द हो सके. आवश्यकता केवल इस बात की है कि मनुष्य किसी पूर्ण और मर्मज्ञ पुरुष का सत्संग करे ताकि सही आदेश (guidance) ले सके. इस प्रकार से सफलता जल्द और सहूलियत से प्राप्त हो जाती है.

प्रश्नः- साधारण रूप से देखने में आता है कि प्रायः नामधारी लोग दुखी दिखाई देते हैं. उनका घरेलू, सांसारिक और मानसिक जीवन दयनीय होता है. इसका क्या कारण है?

उत्तरः- प्रथम तो किसी व्यक्ति की बाबत केवल बाह्य दशा से कोई राय कायम नहीं की जा सकती. प्रत्येक व्यक्ति अपनी दशा स्वयं भली प्रकार जानता है. फिर भी जिनको शिकायत है समझ लो कि वे निगुरे हैं. गुरु धारण करने का वह अभिप्राय कदापि नहीं है कि तुम मान लेते हो कि मेरा गुरु अमुक है. वास्तव में गुरु धारण करने का अभिप्राय वह ज्ञान, समझ, गुरु या तरीका प्राप्त करना है जो जीवों को आनन्दमय बना दे. यदि किसी को कोई पूर्ण पुरुष मिल जाय और जिज्ञासु उसकी सेवा और सत्संग से सारभेद को प्राप्त करले और उसके अनुसार अमली जिन्दगी में आ जाय तो सफलता शर्तिया और अवश्य होगी. वह भेद जो मैंने समझा है उसे बताता हूँ.

न दावा है कोई मुझे, मैं अपना तजरुबा कहता हँ।

दावा करने वाला नादां है, यह मैं सत कहता हूँ ।।

एक इष्ट बनाओ उसमें पूर्णता मानो. दूसरे शब्दों में इष्ट को जीवन की पूरी सामग्री देने वाला समझो. उसका कोई नाम रखो. कोई रूप बनाकर अपने दिल में बिठाओ और उसके ध्यान में रहने का प्रयत्न करते रहो. तुम्हारी हर प्रकार की वासनाएँ स्वयं पूर्ण होती रहेंगी. जैसे-जैसे ध्यान या वासना में पक्कापन होता जायेगा जीवन आनन्ददायक, सुखदायक और शान्तिमय होता जाएगा. खास-खास स्थानों (चक्रों) पर एकाग्रता प्राप्त करने से वहाँ की दशा का उत्तर तुम्हारे शरीर में होता रहेगा और तुम जीवन को सफल समझने लगोगे.

प्रश्नः- क्षमा कीजिए. आप इस बुढ़ापे में मज़दूरी करते हैं. पैंसठ या अस्सी रुपये से कैसे गुज़ारा चल सकता है. आपके पास आने-जाने वालों का भी खर्च है. यदि आपका उसूल सच्चा है तो इसके आमिल (आचरणीय) होते हुए आप स्वयं धनी क्यों नहीं बन जाते. क्या आप पर यह कहावत लागू नहीं होती कि 'खुदरा फजीहत दीगरा नसीहत.'

उत्तरः- आपकी निर्भयता और सचाई के लिए धन्यवाद! सुनो अर्सा हुआ कि लाहौर में दातादयाल महर्षि शिवब्रत लाल जी की पुत्री चुनमुनदेवी (जिनके पति श्री गौरीशंकर लाल अखतर थे) का स्वर्गवास हो गया. मैं उस समय वहीं था. सत्संग हो रहा था. दातादयाल ने कहा कि फ़कीर! मैं बचपन में पारमार्थिक या रूहानी उन्नति का अभिलाषी था. पुस्तकों के अध्ययन से यह ख्याल मिला था कि यदि अपना कोई न हो और सांसारिक बन्धनों से छुटकारा मिल जाय तो मनुष्य जल्द निर्वाण को प्राप्त कर लेता है. इस ख्याल का असर पड़ा और आज लड़की भी चल बसी. मेरे पास श्री गौरीशंकर लाल भी बैठे थे. हम दोनों बराबर उम्र के थे, उन्होंने भी मुझसे कितनी बार कहा था कि अगर स्त्री न हो तो हम परमार्थ में लगें. दातादयाल की बात को सुनकर मैंने उनका ख्याल भी वहाँ प्रकट कर दिया. इस पर श्री गौरीशंकर लाल ने मेरी पीठ पर घूँसा मारा कि ऐसा क्यों कहा.

अब भेद को समझो. मुझे भी बचपन से फ़कीरी का ख्याल था, धन और मान की इच्छा न थी. आठ बरस की उम्र में फ़कीरी के लिए घर से बाहर निकल पड़ा. पिता जी नौ मील से पकड़ कर वापिस लाये थे. जब दाता दयाल की शरण में पहुँचा तो उनकी शिक्षा के संस्कार के कारण मेरा रुझान दुनिया की ओर रहा. सारी जिंदगी अपनी कमाई की बचत को दातादयाल के नाम धाम में भेजता रहा. श्री नंदूभाई ने दातादयाल की आज्ञा से मेरा सब रुपया मेरे नाम से बैंक में जमा कराया हुआ था. उस समय मुझको इस बात का इल्म न था. उन्होंने वह कुल रुपया मेरी स्त्री को दे दिया और मुझे हुक्म दिया कि बावले अपना कमाओ और अपना खाओ. मेरी स्त्री को आज्ञा दी कि इस रुपये में से एक पैसा भी फ़कीर को न देना. संत सत्गुरु रेख में मेख मारते हैं. उन्होंने मेरे कर्म को बदला! मैंने कभी धनवान बनने की इच्छा नहीं की इसलिये निर्धन रहा.

याद रखो! प्रत्येक पुरुष की प्रकृति भिन्न है जैसा जिसका ख्याल वैसा उसका हाल. हाँ! मेरी यह कोशिश अवश्य रही है कि किसी के सामने हाथ फैलाना न पड़े और न मोहताज बनकर रहना पड़े. चुनाचे आज दिन तक दाता ने मेरी लाज रखी है और निश्चय है कि वह रह जाएगी. मेरा लड़का इंजीनियरिंग में पढ़ना चाहता था. चूँकि मेरे पास इतना पैसा नहीं था मैंने इन्कार कर दिया. उसने इस विषय में मेरे भाई को लिखा और उन्होंने उसकी मदद की और कर रहे हैं. मैं आज निर्धन हूँ तो इस कारण से हूँ कि यह मेरी वासना का परिणाम है, या मेरे कर्म का फल है. यथार्थ में मेरी इच्छा उस सारतत्त्व को जानने या सतपद की प्राप्ति की थी और वह पूरी हो गई. इस प्रकार के तजुर्बों के आधार पर मैंने अपने ख्यालात में सचाई पाकर उनके प्रगट करने का साहस किया है. जैसा ख्याल वैसा हाल, जैसी मति वैसी गति.

प्रश्न:- क्या यह ग़लत है कि जैसे जिसके पहले कर्म होते हैं वह वैसा ही बन जाता है.

उत्तर:- ग़लत नहीं, ठीक है मगर यह तालीम हानिकारक है.

तदवीर इन्सां तकदीर इन्सां, के मातहत है दोस्तो।

मगर ऐसा कहना और समझना है जुर्म कबीर दोस्तो ।।

इंसां को बना देता है ऐसा ख्याल मुर्दा दिल।

बूढ़ों के लिए अच्छा है बेशक यह ख्याल दोस्तो ।।

युवकों, बच्चों और गृहस्थी जीवों के लिए यह तकदीर की तालीम भयंकर है. उनको त्याग और वैराग्य की शिक्षा की आवश्यकता नहीं है.

श्री रामचन्द्रजी ब्रह्म के अवतार थे. संसार से वैराग्य उत्पन्न होने पर गुरु विशिष्ट के पास गये और अपने विचार प्रगट किये. उनकी सब बातें सुन कर गुरु ने कहा:-

ऐ राम! दैव-देव आलसी पुकारा करते हैं. (देखो योगवासिष्ठ) वशिष्ठ जी के शब्दों ने राम से वह काम कराया कि जब तक भारतवर्ष कायम है उनकी याद लोगों के दिलों में नया जीवन फूँकती रहेगी. मित्रो! साहस और दृढ़ता से काम लेकर इस संसार में आनन्द और फारिगुल वालों का जीवन बिताओ. आसूदगी (संपन्नता) के विचार रखने का यत्न करो. यह यत्न यही है कि सहसदल कंवल और त्रिकुटी में डेरा डालकर संसार का काम करो. हाँ, जिनकी प्रकृति दूसरे ढंग की है और दुनिया

का काफी अनुभव हो गया है, उनको आगे की मंजिलों (शब्दयोग के स्थानों) की ओर ध्यान देना चाहिए जिनका ज़िक्र प्राणायाम मंत्र में मौजूद है. मगर उनको भी इन दर्जों से गुज़र कर जाना होगा. बच्चों और युवकों को ऊँची शिक्षा (ऊँचे स्थानों का साधन) हानिकारक साबित होगा. आजकल भेड़ या धसान चाल सत्संगियों में चली जा रही है. नौ जवान लड़के और लड़कियों को नाम दे दिया जाता है और त्याग व वैराग्य का सबक पढ़ाया जाता है. इससे उनका सांसारिक जीवन किसी सूरत में बेहतर नहीं हो सकता, उनको केवल गायत्री मन्त्र अर्थात् सुमिरन और ध्यान का उसूल ही बताना पर्याप्त है, वरना याद रहे कि धोबी का कुत्ता घर का न घाट का वाली कहावत लागू हो जायेगी. अपने अनुभव की पुष्टि के लिए दातादयाल के समय के दो उदाहरण देता हूँ.

1. श्री हरिप्रकाश गुप्ता जो श्री रघुनाथ सहाय गुप्ता के लड़के हैं मैट्रिक में पढ़ते थे. उनके पिता के कहने पर दाता दयाल ने लड़के को नाम दे दिया. दो दिन के अभ्यास के बाद उससे कहा कि अब और अभ्यास न करना. शिक्षा प्राप्त करो. विवाह करो. सन्तान उत्पन्न करो. फिर पिछली उम्र में अभ्यास की ओर ध्यान देना.

2. मेरे छोटे भाई राय साहिब सुरेन्द्रनाथ मेरी देखा-देखी छोटी उम्र में सत्संगी हुए थे. दाता दयाल ने कहा कि आओ तुमको नाम की महिमा बता दूँ. उन्होंने एक कागज़ पर लिखा:-

"For Surendra, Life means work and work means life" (सुरेन्द्र के लिये, जीवन ही काम है और काम ही जीवन है.)

काम करो. अन्तिम अवस्था में तुम राधास्वामी दयाल की गोद में जाओगे. इसलिए मैं कहता हूँ कि पुस्तकीय ज्ञान ठीक है मगर वह पूर्ण गुरु के सत्संग द्वारा ही समझा जा सकता है. आज कल पुस्तकों का तूफान आया हुआ है. बिना गुरु का दामन पकड़े केवल पुस्तकों के अध्ययन से मनुष्य ग़लती कर जाता है. मैंने निज अनुभव के आधार पर 'मनुष्य बनो' की आवाज़ उठाई है. हर काम सोच समझकर प्राकृतिक नियम के अनुसार करो. ग़लत रास्ता अख्तयार न करो. फिर कहता हूँ गुरु परायण बनो.

गुरु मता धारण करो, इस बिन नहिं कल्याण।

गुरु बिन नहिं धन धाम है, शक्ति मुक्ति सतज्ञान ।।

ताते सबको चाहिए, ढूँढें कोई कामिल इन्सान।

जो गुरु आज्ञा बरतते, वे हैं चतुर सुजान ।।

जीवन के आदेश को समझ कर, करो अपना कल्याण।

एक ही लाठी में मत हाँको, कुत्ता गधा और इंसान ।।

बाणी पढ़ पढ़ भरम में भूले, अरु पाया दुख महान।

बिन जीवित कामिल पुरुष के, कभी न मिटता है अज्ञान ।।

जीवों के हित प्रकट हुआ हूँ, बन कर कामिल इन्सान।

अगर्चे तुम अहंकारी समझ कर कहोगे मुझको नादान ।।

इसलिए गद्दी पति नहिं बना, न बनाया कोई धाम स्थान।

मान धन दौलत की आस से, रहता हूँ अलगान ।।

जीवों के हित के लिए, धारा भेष फकीर।

ताकि प्रगट कर जाऊँ, सत पुरुषों का असली ज्ञान ।।

चेला काहू बनाऊँ नहीं, न हूँ मैं कोई आचारज।

भाई तुम्हारा बनकर के, करता निज बीती का बयान ।।

कुछ दिन यह शरीर है कायम, दरवाजा है खोल दिया।

सत्संग करो अगर जी चाहे तो, पाओ निर्मल ज्ञान ।।

राज़ को पाकर खुद जीओ, और औरों को जीने दो।

ताकि हो जाये फिर मनुष्य जाति का सही कल्याण ।।

द्वितीय परिच्छेद

(सुमिरन, ध्यान, भजन लगातार)

मौज है मौज है उस दाता दयाल की।

मौज करा रही है करम प्यारे कृपाल की ।।

जनून था वहशत थी पन्थ की करूँ खोज।

अन्जाम खोज का जाहिर कराती मौज अकाल की ।।

सवाल किया जायेगा कि इस मौज की ग़र्ज़ क्या है?

मित्रो! यह संसार अपने ही ख्याल का खेल है. जो व्यक्ति जैसे स्वयं है वह दूसरों को भी वैसा ही समझने के लिये विवश है. बहरा आदमी जब किसी से वार्तालाप करता है तो ऊँची आवाज़ से बोलता है क्यों कि जाने या अनजाने उसका यह ख्याल रहता है कि दूसरा आदमी भी जोर से बोलने पर सुन सकेगा. इसी प्रकार चूँकि मुझे भी प्रत्येक वस्तु को अमली दृष्टिकोण से जानने और समझने की लालसा रही है, इसी विचार से कि शायद दूसरों को भी ऐसी ही इच्छा हो, मैं सहानुभति के प्रभाव से काम करता हूँ. प्रत्यक्ष रूप में मुझे और कोई कारण प्रतीत नहीं होता. सम्भव है स्वभाव का नियम काम कर रहा हो अथवा दाता दयाल का दिया हुआ संस्कार हो कि फकीर संतमत की तालीम में परिवर्तन कर जाना. उन्होंने मेरे नाम यह शब्द लिखा था:-

तू तो आया देही में, धर फकीर का भेषा।

दुखी जीव को अंग लगा कर, लेजा गुरु के देशा ।।

तीन ताप से जीव दुखी हैं निबल अबल अज्ञानी।

तेरा काम दया का भाई, नाम दान दे दानी ।।

मैंने गुरु वचन को ही नाम समझा है.

ध्यान मूलम् गुरु मूर्ति, पूजा मूलम् गुरु पदम्।

मंत्र मूलम् गुरु वाक्यम्, मोक्ष मूलम् गुरु कृपा ।।

उनका आदेश था कि जब तक शरीर है सत्संग कराते रहना. मगर कुतुब की हैसियत में. कुतुब ध्रुव तारे का नाम है जो अपनी निज स्वरूप (ज़ात) के अलावा किसी अन्य के पुजारी नहीं होते और न मालिक को अपने से अलग समझते हैं. इसके साथ-साथ वे :-

(1) किसी विशेष निजी ग़र्ज़ या उद्देश्य के लिये किसी से हेरफेर कर बात नहीं करते.

(2) सांसारिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये द्वार-द्वार की ठोकरें नहीं खाते.

(3) उनका कार्य शारीरिक, मानसिक और आत्मिक रूप में प्राणीमात्र का भला चाहना होता है. इस उद्देश्यवश मैंने संतमत या मनुष्यधर्म की सेवा की है और जब तक जीवन है करता रहूँगा. इस लेख लिखने के कार्य का भी यही उद्देश्य है.

सांसारिक जीवन या प्रवृत्ति मार्ग के विषय में जो सुमिरन, ध्यान और भजन की तालीम संतों ने दी है, इसका दूसरा नाम 'नामदान' भी है.

इसकी व्याख्या मैंने पहले परिच्छेद में भली प्रकार कर दी है फिर भी वह कुछ और व्याख्या चाहती है. यहाँ संक्षेप में वर्णन करके आगे के विषय को लूँगा. सहसदल कंवल या ज्योति स्वरूप का केन्द्र मनुष्य के अपने अन्दर है. कोई भी मनुष्य गुरु द्वारा समझ या भेद लेकर इस स्थान पर दिल एकाग्र करेगा वह सांसारिक जीवन में अवश्य सफलता प्राप्त करेगा. जितने भी पुरुष अपने कार्यों में सफलीभूत हुए हैं, सबने जाने या अनजाने इसी स्थान का सहारा लिया है. यह भी याद रखने की बात है कि असफलता या नाकामयाबी का केन्द्र भी यही है, यदि मैं इन बातों की सचाई को साबित करने के लिए लिखूँ तो एक दफ़्तर की ज़रूरत होगी. इसलिए उसूल को समझ लो और अमल करो. सचाई स्वयंमेव प्रगट होने लगेगी.

इसलिए हमेशा आशावादी (Optimistic) रहो. जो निराशावादी (Pessimistic) होते हैं. उनकी इसी स्थान (सहसदल कंवल) से नाकामयाबी होती हैं. अर्जुन के दिल में निराशावाद के विचार प्रवेश कर गये थे. श्री कृष्ण ने उसको अपने उपदेश से आशावादी बनाकर ज्योति स्वरूप के दर्शन कराकर सफल बना दिया. इसी प्रकार यह सुमिरन, ध्यान और भजन मनुष्य की मानसिक अवस्था को श्रेष्ठ बनाने में, जिसका कोई संबंध पंच भौतिक जगत से नहीं होता, मददगार साबित होता है.

मानसिक अवस्था की श्रेष्ठता से मेरा अभिप्राय मन का ठहराव, निश्चयात्मक

होना, विश्वास, शान्ति और आनन्द है, जिसको ये गुण या सम्पदा प्राप्त है, समझलो कि उसकी मानसिक अवस्था ठीक है वरना ख़राब है. किन-किन दशाओं में मनुष्य की मानसिक अवस्था ख़राब होती है उसके बारे में मैं अपना अनुभव वर्णन करता हूँ.

एक मनुष्य के पास धन-दौलत है, आदरमान, आरोग्यता है, लेकिन अनुभव बतलाता है कि वह फिर भी अशान्त है. क्यों?

(1) साधारणतया प्रत्येक मनुष्य के दिल में बचपन के बाह्य प्रभाव और पुस्तकों के अध्ययन से यह विश्वास हो जाता है कि शान्ति और सुकून (निश्चलता) ईश्वर भक्ति, गुरु भक्ति, नाम, जाप और योगसाधन आदि से प्राप्त हो सकता है. यह धार्मिक संस्कार या विचार अपना प्रभाव दिखलाता है और शान्ति का अभिलाषी पुरुष इन प्रभावों के कारण दौड़धूप करता है. ऐसे पुरुषों में से मैं भी एक था.

दातादयाल महर्षि शिवव्रत लाल जी की एक हिदायत, याद आ गई है, उसका यहाँ पर संकेत करना आवश्यक प्रतीत होता है. एक दफा का जिक्र है कि मैं धाम में उनके साथ तालाब के किनारे घूम रहा था. उस समय और कोई नहीं था. उनको मेरी दीवानगी का इल्म था. आप एक जगह चट्टान पर बैठ गये और मेरी ओर देखकर कहा, “फकीर! एक ख्याल ने या उलझन ने तेरे दिल को जकड़ रखा है. चले चलो. आज्ञा का पालन करो. समय आ रहा है जब तुम उस उलझन से निकल जाओगे और स्वतंत्र और निहाल (तृप्त) हो जाओगे.”

आज आ गया है वक़्त वह हो गया निहाल मैं।

कट गया गुलामी का बन्धन पाया कमाल मैं ।।

चाहता हूँ तुम भी निकलो मज़हब और मिल्लत के शैदाइयो।

सुमिरन ध्यान भजन को कुछ समय अमल में लाइयो ।।

साफ बयानी इसलिये कि तुम्हें उलझन से छुटकारा मिले।

तुम्हारे लिये प्रगट हुये हैं दारुये सत संग से ।।

अशान्ति का दूसरा कारण शारीरिक निर्बलता है. इसका कारण पाचन शक्ति की कमजोरी, विषय-विकार का जीवन और जीवन व्यतीत करने के अमली उसूलों से अनभिज्ञता है. इसका इलाज है जीवन बिताने के सही उसूलों का ज्ञान और अमली जीवन. वह उसूल यह है कि कर्म, इच्छा अथवा वासना कैसे करें और क्या करें. इन बातों का ज्ञान आवश्यक है मगर यह सबके लिये एक नहीं होता, क्योंकि प्रकृति, परिस्थिति आदि की भिन्नता होती है. समय-समय पर भिन्न-भिन्न प्रकार की हिदायतों की आवश्यकता होती है. इसलिये वक़्त गुरु का सत्संग नितान्त आवश्यक है.

(3) तीसरा कारण अशान्ति का यह है कि मानव जगत के बाहरी प्रभावों और बाहय जगत के रंग रूप से प्रभावित होकर बुद्धि यह सोचने और जानने के लिये विवश होती है कि वह कौन है, क्या है, दुनिया क्यों है आदि आदि.

पहली श्रेणी के लोग भक्त, दूसरी वाले आर्त्त व दुखी और तीसरी श्रेणी के लोग जिज्ञासु कहलाते हैं.

पहली श्रेणी वालों का इलाज प्रेम, दूसरी वालों का कर्म और तीसरी श्रेणी वालों का इलाज ज्ञान है. पहली श्रेणी वालों को कामयाबी देर से होती है. दूसरी श्रेणी वालों को बहुत देर से और तीसरी श्रेणी को जल्द कामयाबी हो जाती है. मगर शर्त यह है कि वह किसी पूर्ण पुरुष से सुमिरन, धयान और भजन सीखकर जीवन को अमली बनायें. कई एक मेरे जैसे भी होते हैं जिन को तीनों रोग दुखी करते हैं. जब मैं अपनी हालत पर विचार करता हूँ तो पता चलता है कि इन बातों के अलावा मुझे सांसारिक कठिनाइयों से भी बहुत लाचार होना पड़ा था. यही कारण था कि मुझे सही मार्ग पर लाने के लिये दातादयाल को बहुत कुछ कष्ट और मुसीबत सहनी पड़ी. अतः हमदर्दी के वशीभूत होकर मैं अपने जैसे रोगियों को एक नुस्खा बताता हूँ. वह है किसी पूर्ण पुरुष की पूजा और बस. यद्यपि बताने को मैंने बता दिया मगर सोचता हूँ कि समझेगा कौन?

एक वाक़या सुनाता हूँ. सुनो! मैं गिदड़वाहा स्टेशन पर स्टेशन मास्टर था. एक बार मैं दुनियावी तकलीफ से बेहद परेशान हुआ. शायद 24 या 25 दिसम्बर की बात है जब कि भंडारे का समय था. मैंने दातादयाल को तार दिया कि मैं अत्यन्त कष्ट में हूँ. उस समय वे धाम में थे. सत्संग हो रहा था. तार मिलते ही सब काम छोड़ कर हंसराज को साथ लेकर गिदड़वाहा पहुँचे. सर्दी कड़ाके की पड़ रही थी. कांपते हुये मकान पर पधारे. ढायें निकल गईं. कठिनाई का निवारण किया और चले गये. इस प्रकार के निज अनुभव के आधार पर मैं बार-बार कहता हूँ कि हर एक रोग, मुसीबत तथा कष्ट का इलाज सुमिरन, ध्यान और भजन है अर्थात जो चाहते हो उसकी याद उसका ध्यान और उसमें लय होना. जिसका जैसा इष्ट होता है वही इष्ट उसकी मदद करता है.

शिष्य दुखी तो मैं दुखी, आदि अंत तिहुँकाल ।

पलक एक में प्रगट हो, छिन में करूँ निहाल ।। कबीर

इष्ट का नाम सतगुरु है

माँगो, मिलेगा, अवश्य मिलेगा. मगर उसका भेद है. ज़रूरत की वस्तु वहाँ से माँगी जाय जहाँ से वह मिल सकती है. शान्ति, सुकून (निश्चलता) और आनन्द तुमको मन के अन्दर मिलेगा. इस मन की तीन अवस्थायें हैं :-

महः	जनः	तपः
त्रिकुटी	सुन्न महासुन्न	भँवर गुफा

मन की अवस्थायें त्रिकुटी=सुमिरन, सुन्न-महासुन्न=ध्यान, भँवरगुफा=भजन. (प्रत्येक स्थान पर सुमिरन ध्यान और भजन अलग-अलग भी होता है.)

मन से अपने अन्तर में अपने इष्ट से इतना प्रेम करो कि मस्ती आने लगे और उस मस्ती में ग़र्क या लय हो जाओ. फिर भजन करो अर्थात् शब्द सुनो, और शब्द सुनते-सुनते बेहोशी से बचो. याद रखो वह आन्तरिक शब्द अनहद या नाम तुमको बेहोशी से बचा सकता है, बशर्ते कि किसी पूर्ण पुरुष का सत्संग प्राप्त रहे. जी तो चाहता है कि विवरण सहित लिख दूँ लेकिन अंदेशा है कि लोग ग़लत फ़हमी में न फँस जाएँ. दुनिया किताबों को पढ़ कर दीवानी हो जाती है.

मैंने एक बार 6 महीने तक बारह घंटे रोज़ाना अभ्यास किया. ज़मीन पर सोता था. स्त्री दुःखी थी. यद्यपि सरकारी कामकाज करता था मगर मुझे इल्म न था. चूँकि मैं रिश्वत नहीं लेता था इसलिये स्टाफ़ के लोग मेरी इज्ज़त करते थे. उनको रुपये पैसे का भी फायदा था क्योंकि मेरे त्याग से उनको अधिक हिस्सा मिल जाता था. लेकिन मैंने जो कुछ किया अपने लिये किया, दूसरों की नुक्ताचीनी ऐबों को देखने से बचता रहा. इन कारणों से उस समय में स्टाफ़ के लोग मेरा काम चलाते रहे और मुझे किसी आपत्ति में नहीं पड़ने दिया. मेरी इच्छा थी कि 'सार वचन' आदि ग्रंथों में जिन दर्जों का वर्णन है वह पूर्णतया मुझ पर प्रगट हो जाएँ. रोजाना अभ्यास की डायरी लिख-लिख कर रखता जाता था. छः महीने बाद 1 रुपए की टिकट लगा कर वह डायरी दाता दयाल के पास भेज देता. दाता दयाल ने उसका जो उत्तर मुझे दिया, उसमें अभ्यास के बजाय सत्संग को अधिक प्रधानता दी. अंत में जब मैं उनकी सेवा में हाजिर हुआ तो उन्होंने बात समझा दी. इसलिये पिछली बातों के अनुभव के बाद मैं यह ख्याल करता हूँ कि नहीं मालूम कितने भाई इस अभ्यास की उलझन में फँसे हुये हैं, इसलिये हमदर्दी के ख्याल से सचाई के साथ कहता हूँ कि शायद वे इस ख़ब्त से निकल जाएँ. बहुत से सत्संगियों ने अपना स्वास्थ्य ख़राब कर लिया और बहुत से मेहनत से उकता कर पथ से विमुख हो गये. इन बाह्य प्रभावों ने मुझे सचाई के प्रगट करने के लिये मजबूर किया है और कहता हू कि दोस्तो! भटको मत. यदि पूर्ण पुरुष मिल जाये तो विशेष मेहनत की ज़रूरत नहीं. शान्ति जल्द प्राप्त हो सकती है. बशर्ते कि चेत कर उनकी सेवा करो. सेवा से अभिप्राय उनके वचन को सुनने, गुनने और अमल करने से है.

आओ, आओ मित्रो तुम मेरे सत्संग में।

बात सुनो और गुनो जो कहता हूँ सत्संग में ।।

न समझना मुझे पाखंडी मतलबी ऐ भाइयो।

मैंने उम्र गुजारी है अपनी खास ढंग में ।।

न मेरा कोई पंथ है, पंथ है दिल मेरा अपना।

जिस की समझ देता हूँ मित्रो अब सत्संग में ।।

न हविस दौलत की है न कोई अपना डेरा।

न मान इज्ज़त की हविस है रहता हूँ ऐसे ढंग में ।।

सन् 1942 ई. में रिटायर होने के बाद नहीं चाहता था कि सत्संग आदि का कार्य करूँ क्यों कि इस काम में बहुत तकलीफें भी हैं. लेकिन चूँकि दाता दयाल की आज्ञा थी अतः बाबा साँवले शाह के दरबार में गया. अपने विचार उन पर इस दृष्टि से प्रगट किये कि वे जो कहेंगे उस को दाता दयाल की आज्ञा समझ कर अमल करूँगा. मैंने मस्ती की हालत में 15 मिनट में जो ग़ज़लें कहीं उनको सुन कर उन्होंने कहा कि गुरु आज्ञा मुख्य है. सत्संग का कार्य अवश्य करो. घर में रह कर काम करने से तकलीफ़ होगी. इसलिये उचित है कि धाम चले जाओ. मैंने कहा कि महाराज धाम डेरों या दायरों में सचाई नहीं रह सकती. उनको चलाने के लिये हेराफेरी करनी पड़ती है. दूसरी बात यह कि जब दाता दयाल ने मुझे लाहौर में इस कार्य का आदेश दिया था तो मेरे इस प्रश्न के उत्तर में कि

मैं तो कुछ जानता नहीं क्या बताऊँगा, कहा था कि 'फ]कीर जो कहोगे सत् होगा'. इन सब बातों के सुनने के बाद आपने कहा कि निर्भय होकर काम करो और मेरी हर तरह से सहायता करने का वायदा किया. मैं उनके प्रोत्साहन का आभारी हूँ. जो काम मुझसे मौज ने लेना था ले लिया. अब मेरी आखिरी उम्र है. यदि किसी को सत्संग की आवश्यकता हो तो वह मिल सकता है.

तृतीय परिच्छेद

(सुमिरन, ध्यान, भजन लगातार)

चला चल अरे मन कभी तो तू मर ही जायेगा।

बाद मरने के तेरे तजुरुबा कौन बतायेगा ।।

शायद इसीलिये है अभी तन मन का कलेवर कायम।

कहले जो कुछ कहना है फिर कौन कहने आयेगा ।।

शारीरिक और मानसिक दृष्टिकोण से सुमिरन, ध्यान और भजन की बहुत कुछ व्याख्या हो चुकी है. अब मैं रूहानियत, सत पद या आत्मिक अवस्था के बारे में अपने विचार और अनुभव प्रकट करता हूँ.

कौन समझेगा मेरी बातों को समझ नहीं आती।

मौज लिखाने से भी मगर बाज़ नहीं आती ।।

शायद मंज़ूर हो कुदरत को यही जो लिख रहा।

राज़े हक को लफ़्ज़ों के फेर में हूँ ला रहा ।।

दोस्तो! यदि आप अपने अमली जीवन के तजुर्बों और रहनी पर ध्यानपूर्वक विचार करोगे तो मेरे कथन में सचाई पाओगे. यदि मेरे कथन को पुस्तकों और ग्रंथों से मिलान करोगे तो भ्रम में पड़ जाओगे. खैर! सुनो:-

योग साधन लाख करो तुम रहनी में न होगे मुकम्मिल।

लफ़्ज़ हैं मेरे जो कह रहा हूँ बाद करने के अमल ।।

आप शायद मेरी बात सच नहीं मानेंगे. दृष्टांत या प्रमाण माँगोगे. सुनो! सत पद की दृष्टि से संतों ने योगियों तक का खंडन किया है. उनकी वाणी को पढ़ देखो. जिस समय मैं सुनाम में स्टेशन मास्टर था तब एक वकील साहब आये थे. वे हुज़ूर राय साहिब सालिगराम साहब के शिष्य थे और दाता दयाल के गुरु भाई थे. उन्होंने कहा कि स्वामी जी महाराज के चोला छोड़ने के बाद तीन गद्दियाँ बनीं. आप जानते हैं कि गुरुआई की ग़लत समझ से पक्षपात पैदा होता है. सत्संगी बेचारे पहले स्वामी जी के सत्संग में जाते रहे, फिर हुज़ूर महाराज के सत्संग में. किसी बात पर दोनों ओर के सत्संगियों में कोई अनबन हो गई. तब वकील साहब कहने लगे कि मेरे सामने हुज़ूर महाराज ने फ़रमाया था कि सतलोक के द्वार पर मैं खड़ा हूँ. इनमें से कोई वहाँ न जा सकेगा. तब

वकील साहब ने मुझ से पूछा कि क्या आप इस भेद को खोल सकते हैं. उस समय तो मैंने इंकार कर दिया मगर आज उस भेद के खोलने का समय आ गया है.

करता हूँ इज़हार मैं उस राज़ का बेख़ौफ़ व ख़तर होकर।

इसी राज़ को पाने के लिये जीवन किया है मैंने बसर ।।

सत पद जीवन की उस अवस्था का नाम है जहाँ मानवीय अस्तित्व, सब प्रकार की जिज्ञासाओं, वासना व इच्छाओं व चिन्ताओं से छूट जाता है. जब तक सुमिरन और ध्यान है या प्रेम भक्ति और विचार है, सतपद की अवस्था नहीं आ सकती. फिर सुन लो. अभ्यास केवल साधन है. तजुर्बा है. इष्ट पद नहीं है. कोई आदमी लाख अभ्यास करे, रात-रात भर जागता रहे, उसे आनन्द तो मिलेगा, सिद्धि और शक्ति प्राप्त हो जायगी, संसार में साधू-महात्मा भी कहलायेगा मगर सतपद की प्राप्ति नहीं होगी.

ऐ वाणी तू कर मदद मैं कर सकूँ जाहिर राज़ को।

अफ़सोस तुम में है न ताकत जो बता सको तुम राज़ को ।।

हो के मजबूर मिसाल देता हूँ अगर कोई समझ सके।

सैन बैन बिन और नहीं है चारा, खोलूँ राज़ को ।।

(1) तुम घर आये. किसी कारण से स्त्री गुस्से में भरी बैठी है. तुमने उसकी दशा देखी और तुम्हारे दिल में एक प्रकार की अशान्ति, चिन्ता व खलबली पैदा हो गई. ऐसा क्यों हुआ? इसलिये कि तुम्हारा उससे संबंध है. उस पर दृष्टि पड़ने से विज्ञान के उसूल के अनुसार उसका तुम पर प्रभाव पड़ा और तुम प्रभावित हो गये.

(2) कुत्ता और कुतिया किसी जगह विषय कर रहे हैं. तुम वहाँ होकर गुज़रे, दृष्टि पड़ गई. चूँकि तुम में कामांग का संस्कार मौजूद है तुम प्रभावित हो गये.

इसी प्रकार बाहरी प्रभावों से प्रभावित होने में मनुष्य विवश है. संत वह है जो विचलित नहीं होता. प्रत्येक बाह्य प्रभाव या दृश्य को कुदरत का एक खेल समझता है और चलायमान न होता हुआ अपने आप में अडोल गति में रहता है. निर्भय, बेग़म, शोक रहित तथा चिन्ता रहित रहता है. वह न ईश्वर या ख़ुदा का पुजारी होता है न गुरु का सेवक मगर उसमें किसी प्रकार का अहंकार भी नहीं होता. कहने का तात्पर्य यह कि वह अपनी मिसाल आप होता है, यह केवल संकेत मात्र है. विचार से समझने का प्रयत्न करो. जो मनुष्य ऐसे पुरुष से संबंध और प्रेम रखता है, उसमें भी वही अवस्था पैदा हो जाती है. दूसरे में नहीं हो सकती.

चूँकि संत स्वयं उस अवस्था में रहता है इसलिये अधिकारी, इच्छुक या जिज्ञासु ऐसे पुरुष के दर्शन और प्रेम से अथवा उसके साथ (आत्मिक) संबंध जोड़ने से उस समय स्वयंमेव उस अवस्था में चले जाते हैं. यदि वे भेद को समझ कर उस अवस्था में ठहरने का यत्न करें तो उस अवस्था को अपनाने के लिये भी इस चैतन्य देश में सुमिरन, ध्यान और भजन करना होता है. वह क्या है? उस अवस्था की याद अर्थात् बेग़मी, बेफिक्री, बेख्वाइशी और निर्द्वन्दपने की याद सुमिरन, उस

अवस्था का ध्यान जो कि अपना आप है ध्यान, और उस अवस्था में लय हो जाना, भजन कहलाता है. हाँ, इस अवस्था में जो सुमिरन, ध्यान और भजन होता है वह पहले के सुमिरन, ध्यान और भजन से भिन्न होता है.

मेरी बात को कोई बिरला मनुष्य ही समझेगा, इसलिये अब और अधिक कहना नहीं चाहता. सिवाय उसके जिसने जीवन में अनुभव कर लिया हो, दूसरा समझ नहीं सकता.

बिन करनी अभ्यास बिन, कहन सुनन से दूर।

इस विषय में कबीर साहब का शब्द काफी है.

संतो सहज समाधि भली।

गुरु प्रताप भयो जा दिन से, सुरति न अंत चली।

आँख न मूँदूँ कान न रूँधूँ, काया कष्ट न धारूँ ।

खुले नैन से हँस हँस देखूँ, सुन्दर रूप निहारूँ (1)

कहूँ सो नाम सुनूँ सोई सुमिरन, खाऊँ पीऊँ सो पूजा।

गृह उद्‌यान एक सम देखूँ, भाव मिटाऊँ दूजा (2)

जहाँ जहाँ जाऊँ सोई परिकरिमा, जो कुछ करूँ सो सेवा।

जब सोऊँ तब करूँ दण्डवत, पूजूँ और न देवा (3)

शब्द निरन्तर मनुआ राता, मलिन वासना त्यागी।

उठत बैठत कबहूँ न बिसरे, ऐसी ताड़ी लागी (4)

कहें कबीर यह रहनी उनमनि, सो प्रगट कर गाई।

दुख सुख के इक परे परम पद, तिहि सुख रहा समाई (5)

दूसरा शब्द

जाके मन नाहिं चिन्ता व्यापे, जग में वही है दास फकीर।

अभय रहे चित गुरू पद राखे, धीर वीर गम्भीर।

शान्त भाव व्यवहार परमार्थ, कभी न हो दिलगीर (1)

अपनी पीर न उर में साले, लखे पराई पीर ।।

पर की पीरा न जिसे सतावे, सो अघरम बेपीर घ्२घ्

अपना रूप सम्भाले पलपल, काट मोह जंजीर।

यह फकीर है गुरु का प्यारा, महावीर चित धीर (3)

चाह गई चिन्ता सब भागी, आया भवनिधि तीर।

हंस रूप धर त्याग नीर को, गह लिया ज्ञान का क्षीर (4)

राधास्वामी गुरु का सच्चा बालक, पहर वैराग की चीर।

तन के रहते मुक्त विदेही, सहे न द्वन्द्व शरीर (5)

चतुर्थ परिच्छेद

(सुमिरन, ध्यान, भजन लगातार)

नाम (सुमिरन, ध्यान, भजन) जिसकी तालीम कलियुग में सन्तों और महापुरुषों ने मानव जीवन को श्रेष्ठ बनाने और अन्त में परम पद को प्राप्त करने के लिए दी थी, उसकी व्याख्या मैंने अनुभव के आधार पर बहुत कुछ कर दी है, मगर याद रखो कि जिस स्थान से नाम शुरू होता है या जिस अवस्था में नाम की प्राप्ति शुरू होती है, उस अवस्था का निजी अनुभव जब तक मनुष्य को नहीं होता, वह लाख सिर मारे, उसको पूर्ण लाभ नहीं हो सकता, चाहे रोचक भयानक बातों के सिलसिले में कोई कुछ कहे. नाम देने वाले लाखों को नाम देते भी हैं और रोचक व भयानक शिक्षा द्वारा उनकी तसल्ली की भी कोशिश की जाती है मगर याद रखो कि सिद्धांत हर दशा में सिद्धांत है. फिर वह सिद्धांत क्या है? वह सिद्धांत एक मन के ठहराव की दशा है.

जब तक मन की तरंगें और उमंगें कम नहीं होती, इस नाम अर्थात सुमिरन, ध्यान और भजन का प्रारम्भ भी वास्तविक रूप से नहीं होता. चूँकि जनसाधारण में सचाई की तालीम के अधिकारियों का अभाव दिखायी देता है. इसलिए मन की तरंगों को रोकने और इच्छाओं को वश में रखने के लिए महापुरुषों ने मनुष्यों की प्रकृति की विभिन्नता को दृष्टिगोचर रखते हुए अनेकानेक तरीके चलाये. उनमें से कुछ का सूक्ष्म रूप से वर्णन करता हूँ:-

(1) **कीर्तन** -रोचकता के दृष्टिकोण से मन की तरंगों को रोकने के लिए कीर्तन या शब्द पाठ आदि.

(2) **भक्ति मार्ग** -रोचकता के दृष्टिकोण से मन की तरंगों को रोकने के लिए विश्वास और प्रेम.

(3) **कर्म मार्ग** -मन की तरंगों को रोकने के लिए कर्म मार्ग या मनुष्य को भिन्न-भिन्न प्रकार के कर्म का उपदेश.

(4) **ज्ञान मार्ग** -शास्त्रों, वाणियों और वचनों का नित्यप्रति स्वाध्याय, जो हर प्रकार के विचार वालों के लिए प्रायः लाभदायक होता है. यह प्रारम्भिक शिक्षा है.

लेकिन सच्चाई की तालीम यह है कि जब तक किसी का अजपाजाप पूर्ण नहीं होता, वह किसी पूर्ण पुरुष के वचनों को समझने के योग्य नहीं होता. मगर अजपाजाप करना भी आसान नहीं है. कहना और बात है और अमल में लाना दूसरी बात है. सवाल किया जायेगा कि अजपाजाप का अमल कामयाबी से क्यों नहीं होता या मन क्यों नहीं कर सकता? आखिर कोई कारण तो होगा. हाँ, कारण है और अवश्य है. इसका कारण वीर्य की कमजोरी और मानसिक व्यभिचार है. कान खोल कर सुन लो. कोई मनुष्य उस समय तक कदापि नाम को प्राप्त नहीं कर सकता, जब तक वह विषय-विकार की आदत से छुटकारा नहीं पाता. लेकिन ध्यान रहे मेरा अभिप्राय गृहस्थ जीवन

के त्याग से कदापि नहीं है. यही कारण था कि स्वामी जी के समय में प्रत्येक व्यक्ति को नाम नहीं दिया जाता था.

विषयों से जो हो उदासा। परमारथ की जा मन आसा ।।

अगर किसी व्यक्ति को नाम दे दिया गया तो उसे कोई फायदा नहीं होगा. इसका सबूत उन नामधारी सत्संगियों का जीवन है जो रस्मी तौर पर नाम ले लेते हैं और अमली जीवन में नहीं आते.

अब मैं आप बीती सुनाता हूँ. 16 वर्ष की आयु में गृहस्थ में प्रवेश हुआ. गो बचपन से भाव व विचार प्रेम और भक्ति के अवश्य थे मगर मन के अन्दर तरंगें भी जोरों पर थीं. वह प्रेम और भक्ति का भाव या मौज दाता दयाल के चरण-कमल में ले गया. नाम भी मिल गया, मगर बरसों तक प्रेम की भावनाओं और अभ्यास के दृश्यों में खेलता रहा. मन की थिरताई से कोरा रहा. दाता दयाल ने मेरे साथ भिन्न-भिन्न खेल खेले मगर कामयाबी न हुई. मौज से मेरा तबादला बसरा बग़दाद को हो गया और 12 साल तक अकेला वहाँ रहा. उस तप के जीवन ने, जिसकी वजह से मेरा मानसिक ब्रह्मचर्य कायम रहा. मेरा काम बनाया. आप सुनकर हैरान होंगे कि लम्बी मुद्दत में मैंने बसरा और बग़दाद के शहरों तक को नहीं देखा. अपने मकान और दफ़्तर से ही वास्ता रखा. न किसी से मिलना न जुलना. चन्द सत्संगी मित्रों में ही जीवन व्यतीत किया. प्रेम और भक्ति भावनाओं ने यकसूई और थिरताई दिलाई. मैं फिर कहता हूँ कि नाम कोई और चीज है और कीर्तन, गाना-बजाना और भिन्न-भिन्न प्रकार की भक्ति दूसरी वस्तु है. इन कामों का कोई संबंध नाम के साथ नहीं है. चूँकि ये प्रारम्भिक साधन हैं इसलिए पहले इन क्रियाओं या साधनों को कर लेने के बाद फिर अजपाजाप की बारी आती है. उसके बाद जब अजपाजाप ख़त्म हो जाता है तो फिर किसी पूर्णपुरुष के वचनों के समझने की योग्यता जागती है. उस समझ से काम लेकर और अपनी इच्छाओं को कंट्रोल करके जब इच्छा करने वाला (साधन के स्थानों) सहस दल कंवल, त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न, भंवरगुफा आदि के केन्द्रों पर बैठकर एकाग्र होता है तो उसमें वे सब बातें पैदा हो जाती हैं जिनकी एक खोजी को ज़रूरत होती है. मुझे अक़सर सत्संगी मिलते हैं, जो अपनी कमियों की शिकायत करते हैं. अगर वे केवल अजपाजाप की तरफ तवज्जः दें तो ज़रूर कामयाब होंगे. इसी का दूसरा नाम 'नाम माला' भी है. चूँकि सांसारिक जीवन में जनसाधारण को यह आवश्यक होता है कि अपने जीवन को बेहतर हालत में बितायें, इसलिये आवश्यक है कि पहले इंसानियत या मनुष्यता का सबक पढ़ा जाये. जो सही अर्थों में इंसान ही नहीं हैं, इनको नाम देना बंजर में बीज बोना है! इन तजुर्बों के आधार पर मेरी समझ में यह बात आई कि नाम की तालीम के साथ इंसानियत की तालीम लाजिमी है. इस अनुभव के बाद अचानक मुझे दाता दयाल की अंग्रेजी पुस्तक 'लाइट ऑन आनन्द योग' पढ़ने का मौका मिला. वहाँ इख़लाक या शिष्टाचार की तालीम के सिलसिले में दाता का यह आदेश पढ़ा :-

Be man entire whole and in everything (सर्वत्र और सब प्रकार मनुष्य बनो)

इसलिए सत्संगी भाइयों को मैं सलाह देता हूँ कि पहले वे इंसान बनें. अपने इख़लाक, चाल-चलन, रंग-ढंग, चाल-ढाल व व्यवहार को बेहतर बनायें. फिर इसके बाद नाम की प्राप्ति होगी. मैंने यह

अपना तजुर्बा बताया है.

अब रह जाता है सवाल मुक्ति अर्थात् आवागमन से छुटकारा पाने का.

जिन्दगी और मौत दोनों दर्द की हैं सूरतें।

दूर होगा कैसे यह बेसूद दर्मा हो गया ।।

कुछ लोग बुद्धि और विचार की गहन अवस्था में मुक्ति मान लेते हैं, यह भी बेहतर हालत है अथवा मस्ती की दशा में आनन्द की प्राप्ति करते हैं, यह भी मुबारक है. मगर मैंने जीवन में एक ऐसी हालत का अनुभव किया है कि जहाँ मनुष्य अपने होने या व्यक्तित्व को भूल जाता है.

मैं पना जाता रहा, जब तू पना भी दूर है।

मिट गया 'मैं' 'तू' का झगड़ा, कशमकश काफ़ूर है ।।

न आनन्द है न विचार है, न कर्म धर्म और ज्ञान है।

न सुख न दुख न क्लेश कुछ, न जान है न बेजान है ।।

ख़ुदा नहीं, ख़ुदाई नहीं जहाँ एक तत्त्व प्रधान है।

आप अपने आपमें है वह, तब वहाँ निर्वाण है ।।

आवागमन से छुटकारा उस वक्त तक न होगा जब तक चौथे पद की प्राप्ति न होगी. अफसोस यह है कि मैं जो कुछ कहना चाहता हूँ उसको प्रकट करने के लिए शब्द नहीं मिलते फिर भी कोशिश करता हूँ कि पाठक मेरी बात को समझ सकें. कबीर साहब का शब्द जो पिछले परिच्छेद में आया है (सन्तो सहज समाधि भली) चौथे पद पर स्पष्ट रूप से प्रकाश डालता है.

चौथा पद क्या है? अनुभव है. सारज्ञान है. जीवन की वह अवस्था है जिसमें इन्सान की बुद्धि के अन्दर किसी प्रकार का भ्रम, शक, सन्देह या लालसा नहीं रहती. बच्चों जैसा सरल स्वभाव रहता है. मगर यह हालत जिन्दगी के तजुर्बे के बाद आती है. तजुर्बे से अभिप्राय अभ्यास से है. उस तजुर्बा या अभ्यास को कराने वाला बाहरी पूर्ण पुरुष होता है. इसलिए सन्तों ने चौथे पद की तालीम देते हुए आदेश दिया है कि किसी पूर्ण पुरुष का सत्संग करो. ढाई घड़ी का सत्संग सौ बरस की पूजा से बढ़ कर है. मगर किनके लिए, जिनका चित्त समाधान है मगर वह समाधानपना बिना अजपाजाप या ध्यान या शब्दयोग के न आयेगा. जब मैं बग़दाद में था, दाता दयाल ने आदेश दिया था कि जो अभिलाषी हो उसे नामदान दे दो क्योंकि वहाँ बहुत से सत्संगी थे. मगर जब उनकी वृत्ति थिर हो जाये या दूसरे शब्दों में जब गुरु मूर्ति प्रकट हो जाये या अजपाजाप पूरा हो जाये तो उन अधिकारियों को मेरे पास भेज दो. अफ़सोस है.

जो कुछ कहना चाहता हूँ मैं बयान कर सकता नहीं।

अफ़सोस है दिल के तखैघ्यल से मफहूम कहा जाता नहीं ।।

इसलिए सतसंग है मुख्य पर किनके लिए सुन लो ज़रा।

जिनकी वृत्ति थिर हो, दूसरों के लिए है बे फायदा ।।

सतसंग दो प्रकार के हैं एक निवृति एक प्रवृति।

दोनों का आधार है किसी कामिल इंसान की दया ।।

समझ करके यह भेद मौज मेरे दिल को है कह रही।

उठ खोल दर सतसंग का शायद किसी का हो जाये भला ।।

देता हूँ निवेद पुराने सत्संगियों को समझ कर भाई।

सुहबत करो मेरी समझा दूँगा सैन बैन का ले आसरा ।।

तन थिर मन थिर सुरति निरति थिर करके बैठो सतसंग में।

फिर उठाओ अनुभव की बातों का लुत्फ और मजा ।।

दुनियावी जिन्दगी के लिए कुछ और है परमारथ के लिए कुछ और।

जैसी जिसकी भावना है वैसा होगा फायदा ।।

कई बार ख्याल आया है कि पाठक शायद मुझे दीवाना समझें या अहंकारी ख्याल करें, मगर यह बात नहीं है.

मोक्ष मूलम् गुरु कृपा।

मगर याद रहे. गुरु की कृपा कोई फूँक मारना नहीं है बल्कि राज़ या भेद को समझा देना ही गुरु कृपा है. बशर्ते कि गुरु भेद का ज्ञाता हो. साथ ही वृत्ति या चित्त को थिर किये बिना कोई व्यक्ति राज़ को समझ भी नहीं सकता है. हुजूर बाबा साँवले शाह फरमाया करते थे अन्दर बढ़ो, पर्दा खोलो. अन्दर बढ़ना मन को थिर करना है और भेद को पाना पर्दा खुलना है.

अन्तिम गूढ़ रहस्य जो सुमिरन ध्यान और भजन के बाद खुला।

एक बार मैंने हाथ बाँधकर मुरशिद से यों सवाल किया।

वह क्या भेद है संतमत में जो और में न था।

क्यों सब मज़हबों को काल मत और मायामत का नाम दिया।

वह दयाल मत क्या है जिसके इज़हार के लिये आपने काम किया ।।

देखकर मेरी तरफ हँस कर बोले थे मेरे प्यारे दयाल।

चला चल हिम्मत बाँधे एक दिन तू पायेगा राज़े काल ।।

इशारे में कहा था बे ज़रूरत यहाँ कुछ नहीं होता।

ज़रूरत हुई तो तू आया और मैं भी प्रकट हुआ ।।

चूँकि इस ज़रूरत का अनुभव मैंने कर लिया है कि कलियुग में सन्तों के प्रकट होने का कारण क्या है इसलिए विकास की भावुकता वश कहता हूँ :-

ख़ुदा परस्ती हक़ परस्ती नफ़्स परस्ती या दिल परस्ती है काल मत।

सब परस्तिश छोड़ कर इंसां परस्ती है दयाल मत ।।

काम आता है जो इसां इसां के और सुख पहुँचाता है उसे।

वही इंसान दयाल मत में है ख़ुदा परस्ती काल मत ।।

मज़हब मिल्लत मान व दौलत हिरस हविस सब काल हैं।

इनसे निकले जो इंसान वही दरअसल बा कमाल है ।।

मगर इस ख़ुदा परस्ती (ईश्वर पूजा) हक़ परस्ती या नफ़्स परस्ती मन की व अन्य प्रकार की पूजाओं से निकलना महाकठिन है. इनसे निकलने का केवल एक ही रास्ता है कि किसी पूर्ण पुरुष का सत्संग और वह भी भावुक न हो. यद्यपि प्रारम्भ में सत्संग भावुक हो जाता है. लेकिन यदि बाहरी पुरुष पूर्ण है तो धीरे-धीरे वह इंसान को इंसान बना देता है. इसलिए मेरे विचार और अनुभव में सबसे श्रेष्ठ पूजा पूर्ण पुरुष की सेवा है और यह सेवा यह है :-

दर्शन करे वचन पुनि सुने। सुनसुन कर नित मन में गुने ।।

सुन सुन काढ़ लेय तिस सारा। सार काढ़ फिर करे अहारा ।।

करि अहार पुष्ट हुआ भाई। जग भय लाज सब गई नसाई ।।

मुझे बड़ा अफ़सोस हुआ है कि यद्यपि मैं प्रत्यक्ष में दाता का प्रेमी रहा मगर असली और सच्चा प्रेम न कर सका अर्थात् मैंने उनकी तालीम के सारतत्त्व को न समझा. आखिर उन्होंने यह इलाज तजवीज़ किया कि मुझे सत्संग और नामदान का काम दिया. इसलिए कि शायद बात मेरी समझ में आ जावे. वे कहा करते थे कि फकीर तुम में 99 नुक्स हैं लेकिन एक गुण है कि तू दम्भी (Hypocrite) नहीं है और यह गुण तुझे इष्ट पद तक ले जायेगा.

दोस्तो! मैं अब न गुरु हूँ न चेला. मेरी हालत क्या है?

तीन छोड़ चौथा पदा दीन्हा। सत्तनाम सतगुरु गति चीन्हा ।।

दाता ने काम सुपुर्द किया था, कर दिया।

आरज़ू है फैले संतमत या मज़हबे इंसानी।

मिटें इंसान के दिल से द्वेष नफ़रत और जज़्बाते नफ़सानी ।।

खुशी से जियें बशर और दूसरों को जीने दें।

बात समझें कदर करें आपस में पावें सच्ची जिन्दगानी ।।

मिटाकर तफ़र्का जिन्दगी को खुशहाल और फारिगुल बाल बनावें।

मिटाकर अँधेरा, अज्ञान खुशी से जिन्दगी बितावें ।।

पंचम परिच्छेद

राधास्वामी मत, कबीर मत और नानक मत की तालीम व सच्चाई की विशेषता

(लेखक:परमसंत दयाल फकीरचन्द जी महाराज)

जज़्बए दिल[1] मजबूर करता है और लिख रहा हूँ बाहोश हूँ।

तास्सुब नहीं है पक्ष नहीं है, जनूनी[2] नहीं न मदहोश[3] हूँ ।।

मानता हूँ समझने वाले कम हैं, फिर भी मजबूर होकर लिख रहा।

क्योंकि मुर्शिदे कामिल[4] के अहसान से होना चाहता सुबकदोश[5] हूँ ।।

1. हृदय के भाव 2. उन्मत्त 3. अचेतन्य 4. सत्गुरु 5. उऋण

सुबकदोशी भी मजबूरी (विवशता है). दुनिया में आया. होश आया. खोज की. किस की? कि मैं कौन हूँ? मेरा आधार कहाँ है? धार्मिक जगत के प्रभावों ने उन्मत्त बना दिया. फिर स्वप्न ने विश्वास दिलाया कि तेरा आधार मालिक या कुछ और कहो दाता दयाल महर्षि शिवव्रत लाल के रूप में आया हुआ है. पतंगा बनकर दीपक पर प्राण देने लगा. वहाँ से राधास्वामी मत के अपने शब्दों के आधार पर नाम की दीक्षा मिली. जीवन में अनुभव होते गए. चूँकि दाता दयाल ने अपना सांसारिक जीवन मेरी दृष्टि से इस कारण से नष्ट कर लिया था कि वे जीवन भर राधास्वामी शब्द के सहारे प्रकाशन का कार्य करते रहे. परिणाम यह हुआ कि दूसरे धर्मों के लोग पक्षपात के कारण उनसे लाभ न उठा सके. स्वयं राधास्वामी मत वाले गुरुइज़्म की गलत समझ के कारण उनसे भागते रहे और सच्चाई के रहस्य को न समझ सके.

दूसरों के संबंध में क्या कहूँ मेरे अपने समुदाय के बहुत से भाई कोरे रहे. कोरे रहने से मेरा अभिप्राय यह है कि वे अपने सांसारिक, मानसिक और आत्मिक जीवन में तुष्टि प्राप्त न कर सके. प्रारम्भ में मेरी भी यही दशा थी. इसका कारण केवल यह था कि दाता दयाल का कथन इशारों या संकेत रूप में होता था. मेरे हृदय पर 'सार वचन पद्य व गद्य' तथा धार्मिक पुस्तकों की विचारधारा का गहरा प्रभाव था और कुछ मानसिक दुर्बलतायें ऐसी थीं जिनके कारण मैं बहुत दिनों तक अपनी कुरेद को मिटाने में सफल न हो सका. विवश होकर मुझे भिन्न-भिन्न अनुभवों की श्रेणियों से गुजरना पड़ा ताकि वह अभीष्ट वस्तु मुझे मिल जाये. उनमें से पहली अवस्था -अपने आप में सच्चा होना, दूसरी अवस्था -अपने आपको पूर्णतया अपने आधार के शरणागत कर देना, तीसरी अवस्था -अपने आपको हर प्रकार के निज स्वार्थ से स्वतन्त्र रखना है.

जीवन के अनुभव ने जहाँ पहुँचाया या जो समझाया उसको अपने प्रारब्ध कर्मभोग के अधीन प्रकट करने को विवश हूँ. मैंने अपने अनुभव को प्रकट करने में बहुत कुछ सच्चाई से काम लिया है. सच्चाई प्रिय लोग और वे सज्जन, जो इस मार्ग पर चले हैं, उसको सच मानते हैं. हाँ, पक्षपाती, टेकी या गुरुवाई के प्रेमी संभव है सहमत न हों.

संयोग से कल एक गाँव में सत्संग में गया. सत्संग में साधारणतया वाणी को लेकर उसकी व्याख्या की जाती है. रीति के अनुसार मैं भी उस विधि के पालन करने के लिए विवश हो गया. शब्द

निकला :-

मैं कहूँ कौन से भाई। कोई मेली नजर न आई ।।

जो बात सन्त बतलाई। काहू से मेल न खाई ।।

त्रिलोकी सभी सुनाई। चौथे का मर्म न गाई ।।

जिन चौथा लोक जनाई। सो अचरज करते भाई ।।

कोई माने न बहुत मनाई। अब क्योंकर करूँ लखाई ।।

मैं समझ यही चित्त लाई। बिन मेहर न श्रद्धा आई ।।

जो सतगुरु होयें सहाई। तो सभी बात बन जाई ।।

तातें यह गिनत मिटाई। राधास्वामी चुप रहाई ।।

मित्रो! राधास्वामी मत की शिक्षा है :-

तीन छोड़ चौथा पद दीन्हा। सतनाम सतगुरु गति चीन्हा ।।

इसी चौथे पद का संस्कार दाता दयाल ने मुझे दिया था. आज मैं इसकी व्याख्या करना चाहता हूँ.

मगर शोक है वाणी मेरी मदद नहीं है कर सकती।

लाख करूँ मैं कोशिश इज़हार नहीं है कर सकती ।।

फिर भी हिम्मत बाँधकर आया हूँ मैदान में।

ठेकेदार हूँ समझाने का गर इच्छा है किसी इंसान में ।।

सुनो! आन्तरिक श्रेणियाँ जो कि मनुष्य के अपने ही व्यक्तित्व के भान व बोध हैं उनकी अन्तिम श्रेणी क्या है? योगियो, अभ्यासियो, ध्यानियो! बताओ अन्तर में क्या मिलता है?

वही, जिस प्रकार के संस्कार, विचार, इच्छा या बाह्य प्रभाव तुम्हारे मन पर पड़े हुए होते हैं, चाहे वे प्रभाव माँ-बाप से लिये गये हों या पुस्तकों के पढ़ने अथवा सुनने और देखने से प्राप्त किये गये हों.

जिसकी जितनी इच्छा शक्ति शक्तिशाली होती है उसके ख्याल, संस्कार, बाह्य प्रभाव और इच्छाएँ उसके अन्दर विकसित होकर उतनी ही प्रतिबिम्बित या अक्स डालती होती हैं. यह बात सर्वथा ठीक है और इसी का नाम काल और माया है. जो वस्तु इन समस्त दृश्यों को देखती, सुनती अथवा अनुभव करती है या जो साक्षी रूप में इस तमाम खेल का आधार है, वह क्या है?

वह तुम्हारा व्यक्तित्व है, ज़ात है, स्वरूप है. जब मनुष्य को यह समझ आ जाती है उसका व्यक्तित्व इस त्रिलोकी के खेल को देखता, सुनता और अनुभव करता हुआ भी इसके प्रभावों से बरी (स्वतन्त्र) रहता है. इस अनुभव या ज्ञान के पूर्ण रूपेण निश्चयात्मक होने का नाम चौथा पद है. लेकिन याद रखो! जब तक तवज्जह या बोधन शक्ति अन्तर के शब्द में लय होकर अशब्द गति को प्राप्त न कर लेगी, पूर्ण निश्चय न होगा. अतः आवश्यक है कि किसी पूर्ण पुरुष की संगत से

लाभ उठाया जाये. इसलिए संतमत में जीवित और पूर्ण पुरुष जो स्वयं चौथे पद का वासी हो, की संगत को महत्व दिया गया है. याद रखो! यह केवल एक कोर्स (मार्ग) है जो थोड़े समय में तय हो सकता है. मगर इसमें शिक्षा का वही सिद्धांत काम करता है कि जैसे हर विद्यार्थी बी.ए., एम.ए. नहीं हो जाता, इसी तरह हर अभ्यासी इस अवस्था को प्राप्त नहीं कर सकता.

शरीर मन और आत्मा त्रिलोकी है. इन्हीं का दूसरा नाम सत-चित-आनन्द है. इसी प्रकार रचना में माया देश, काल देश और दयाल देश की त्रिलोकी है. शारीरिक चेष्टाओं में खेलने के लिए प्रत्येक व्यक्ति विवश है मगर इनके खेलों में भिन्नता रहती है. इसी प्रकार से प्रत्येक प्राणी के मानसिक विचार भिन्न-भिन्न होते हैं तथा हर अभ्यासी, हर योगी और प्रत्येक ध्यानी के आन्तरिक दृश्यों में भिन्नता रहती है. इस भिन्नता का कारण उनकी अपनी प्रकृति और बाह्य प्रभाव होते हैं. जब तक जीवन है खेलना अवश्य है. अन्तर केवल इतना है कि चौथे पद में रहने वाले का खेल नियमित और संयमित होता है. अन्य लोगों की यह दशा नहीं होती. हाँ, जो मनुष्य किसी पूर्ण पुरुष की संगत का लाभ उठाये हुए होते हैं वे अपने खेल को अपनी संकल्प शक्ति से बहुत कुछ श्रेष्ठ बना सकते हैं. अन्य लोगों के लिए इसका होना कठिन है. कहा है -'ब्रह्म ज्ञानी आप परमेश्वर.'

मैं अपने अनुभव के आधार पर जोरदार शब्दों में कहता हूँ कि जब तक देश के धार्मिक, सामाजिक या राजनैतिक नेता चौथे पद के वासी न होंगे उनसे मनुष्य जाति की उन्नति की आशा रखना कठिन है. हाँ, कठिन है. मैं इसके प्रमाण में वर्तमान स्थिति की ओर आपका ध्यान दिलाता हूँ.

ईश्वर पूजा -यह कैसे दुख की बात है कि ईश्वर, परमेश्वर या ब्रह्म की जनसाधारण पूजा करते हैं और यही उनके जीवन के पूर्ण आदर्श हैं और इन्हीं के नाम पर भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के अनुयायी बन-बन कर मनुष्य-मनुष्य के रक्त के प्यासे बन रहे हैं. कारण इसका यह है कि जातियों या पार्टियों के नेता चौथे पद का अनुभव नहीं रखते और गलत पथप्रदर्शन करते हैं.

गुरु पूजा -जो मनुष्य गुरु पूजा के मानने वाले और विश्वास रखने वाले हैं वे भी पक्षपात, हार्दिकसंकीर्णता, अज्ञान और जड़ता के कारण एक दूसरे के गुरुओं को बुरा भला कहते हैं और अपने अनुचित व्यवहार से घृणा फैलाते हैं. कारण क्या है? यही कि चौथे पद का अनुभव नहीं रखते. चौथे पद का वासी किसी दशा में भी घृणा और द्वेष के प्रभाव में नहीं आ सकता.

राजनीतिक जगत -देश के भीतर भिन्न-भिन्न पार्टियाँ -काँग्रेस, सोशलिस्ट, जनसंघ, कम्युनिस्ट आदि काम कर रही हैं और प्रत्येक पार्टी दूसरी पार्टी के विरुद्ध सत्ता प्राप्त करने अथवा स्थापित करने का प्रयत्न करती हैं. ये सब अपनी अपनी बुद्धि के अनुसार कार्य कर रही हैं. मगर प्राकृतिक नियम से अनभिज्ञ हैं.

पात पात को सींचते, वृक्ष को दिया सुखाय।

माली सीचे मूल को, ऋतु आये फल खाय ।।

जब तक पथप्रदर्शकों और नेताओं के हृदय में सच्चा ज्ञान और सच्ची समझ न आयेगी और जनसाधारण उस पर चलेंगे नहीं तो देश में शान्ति नहीं आ सकती.

घरेलू जीवन -कौन सा भाग्यशाली गृहस्थ है जहाँ परिवार के सब लोग मेलजोल और खुशी से

जीवन व्यतीत करते हैं. घर-घर में लड़ाई, भाई-भाई में झगड़ा, सास-बहू की अनबन और पति-पत्नी में खींचातानी. क्या यह सुखदायक दशा है? कारण क्या है? इसका किसी को ज्ञान नहीं. वह ज्ञान चौथे पद में रहने वाली महान आत्मा से मिलता है.

मनुष्य का व्यक्तिगत जीवन -प्रत्येक मनुष्य दुखी और अशान्त दीख पड़ता है क्योंकि इसे ज्ञान नहीं कि सुख और शान्ति कहाँ है. सुख और शान्ति शरीर के संयम, मन के संयम और बुद्धि के संयम में है. और इनको संयम में रखने की शिक्षा केवल वह पुरुष दे सकता है जो चौथे पद का वासी है.

इसीलिए महात्माओं, सन्तों और पूर्ण पुरुषों ने चौथे पद का अनुभव करने के पश्चात अपना अनुभव वर्णन किया और मानव जीवन की उन्नति के लिए केवल एक उपाय, युक्ति या मन्त्रणा इस कलियुग में प्रकट की. वह है केवल नाम दान:-

कलि केवल इक नाम अधारा। श्रुति स्मृति संत मत सारा ।।

और यह नाम पूर्ण पुरुष के अधीन रखा गया है. इसी का नाम सच्चा गुरुमत है.

मैं सबको यही मन्त्रणा देता हूँ और उनसे प्रार्थना करता हूँ कि जीवन व्यतीत करने के उचित मार्ग का ज्ञान प्राप्त करें जो चौथे पद के अनुभव के पश्चात होगा. (इस विषय को 'मानव धर्म' पुस्तक के प्रथम भाग में वर्णन किया है और द्वितीय भाग, जो शीघ्र प्रकाशित होगा, में व्यावहारिक तथा अमली जीवन को सुखमय शान्तिमय बनाने को महाराज जी की अनुभव पूर्ण शिक्षाएँ होंगी.) जब तक जीवन है दुनिया में निष्पक्ष, निर्वैर, निर्भय और समता की अवस्था में जीवत बितायें. स्वयं जीयें और दूसरों को जीने दें.

मुझे भली प्रकार याद है कि जब मैं बसरा बग़दाद में था तब दाता दयाल ने मुझे आदेश दे दिया था कि फकीर! ऐसी अवस्था में रहो कि जहाँ जाओ वहाँ तुम्हारी ओर लोग देखने को विवश हों. मैं इस रहस्य को उस समय न समझ सका. यदि कुछ समझा हूँ तो अब इतना समझा हूँ कि संगत के फल के अनुसार जैसी वस्तु को देखोगे वैसे ही संस्कार तुम में आवेंगे.

मैंने जब सत्संग के कार्य को प्रारम्भ किया है तो मुझे भी सोचना चाहिए कि मैं क्या दे सकता हूँ. सत्संग औषधालय या स्कूल की हैसियत रखता है. मेरे पास शारीरिक, मानसिक और आत्मिक रोगों की दवाई है. वह मैं सत्संग में देता हूँ. जो मेरे पास आते हैं उनको आनन्द (खुशी), निश्चिन्तपना (बेफिक्री), अशोकपना, सन्तुष्टि 90 फीसदी तक मिलती है. इसकी जानकारी मुझे लोगों के अनुभवों के सुनने से भी हुई है.

हाँ, वह खुशी व निश्चिन्तता आदि हर एक व्यक्ति के पास स्थायी रूप से नहीं रहती है. स्थायी रूप से लेने के लिए साधन का मार्ग है अर्थात जो व्यक्ति अपने अन्तर में उस स्थान पर ठहरे जिस स्थान पर मैं ठहर कर आनन्द आदि लेता हूँ, तब वह वस्तु या अवस्था स्थायी हो सकती है.

सत्संग में मैं उस ज्ञान या समझ को प्रकट करता हूँ जिसको यदि कोई समझ ले और साधन करे तो वह स्वयं उस अवस्था को अपने अन्तर स्थायी रूप से रख सकता है. इस साधन का नाम -नाम जप या सुमिरिन, ध्यान और भजन है.

असली और सच्चा लाभ अर्थात सच्ची स्वतन्त्रता अथवा त्रिगुणात्मक जगत से निकलना केवल उसी समय होगा जब कोई ऐसे पुरुष का सत्संग करे जो स्वयं इस त्रिगुणात्मक जगत से स्वतन्त्र हो अर्थात चौथे पद का वासी हो, मगर उसके अधिकारी बहुत ही कम लोग होते हैं. जो व्यक्ति इस सांसारिक जीवन को उच्च और सुखदायक बनाना चाहता है और सत पद में रह कर अपने व्यक्तित्व को मिटाना चाहता है उसको किसी पूर्ण पुरुष का सत्संग अनिवार्य है. यदि मानव आनन्द, सर्वसम्पन्नता, निश्चिन्तता आदि प्राप्त करना चाहे तो उसको इस नियम को ग्रहण करना चाहिए. वह यह है :-

जैसा ख्याल वैसा हाल, जैसी करनी वैसी भरनी, जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि, जैसी गति वैसी मति. चूँकि मनुष्य को यह ज्ञान नहीं है कि कहाँ, कब और कैसे विचार करना है इसलिए किसी पूर्ण पुरुष के सत्संग को मुख्य रखा गया है.